INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

LATEST EDITION

RAS

RAJASTHAN PUBLIC SERVICE COMMISSION

मुख्य परीक्षा हेतु

HANDWRITTEN NOTES

[भाग -4]

समाजशास्त्र + प्रबंधन + लेखांकन एवं अंकेक्षण

INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

RAS

RAJASTHAN PUBLIC SERVICE COMMISSION

मुख्य परीक्षा हेतु

भाग – 4

समाजशास्त्र + प्रबंधन + लेखांकन एवं अंकेक्षण

<u>प्रस्तावना</u>

*प्रिय पाठकों, प्रस्तुत नोट्स "**RAS (Rajasthan Administrative Service) (मुख्य परीक्षा हेतु)"** को एक विभिन्न अपने अपने विषयों में निपुण अध्यापकों एवं सहकर्मियों की टीम के द्वारा तैयार किया गया है / ये नोट्स पाठकों को **राजस्थान लोक सेवा आयोग (RPSC)** द्वारा आयोजित करायी जाने वाली परीक्षा "**Rajasthan State and Subordinate Services Combined Competitive Exams" मुख्य** भर्ती परीक्षा में पूर्ण संभव मदद करेंगें/*

अंततः सतर्क प्रयासों के बावजूद नोट्स में कुछ कमियों तथा त्रुटियों के रहने की संभावना हो सकती है / अतः आप सूचि पाठकों का सुझाव सादर आमंत्रित हैं/

प्रकाशकः

INFUSION NOTES

जयपुर, 302029 (RAJASTHAN)

मो : 9887809083

ईमेल : contact@infusionnotes.com

वेबसाइट : http://www.infusionnotes.com

Whatsapp करें - https://wa.link/9qwi7z

Online order करें - https://bit.ly/41wfqPD

मूल्य : ₹

संस्करण : नवीनतम (2023)

	समाजशास्त्र	
क्र.सं.	अध्याय	पेज नं.
1.	भारत में सामाजिक विचार • समाज शास्त्र का विकास • भारतीय समाज में जाति और वर्ग ○ प्रकृति, उदभव, प्रकार्य, चुनौतियाँ • जाति और वर्ग में अंतर • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	1-10
2.	परिवर्तन की प्रक्रियाएँ • संस्कृतिकरण ○ संस्कृतिकरण की विशेषताएँ , आलोचना, कारक, प्रभाव • पश्चिमीकरण ○ परिणाम, भूमिका, विशेषताएँ • लौकिकीकरण ○ कारण, कारक, प्रभाव • भूमण्डलीकरण ○ उद्धेश्य, विशेषताएं, प्रभाव, पक्ष व विपक्ष के तर्क, समस्याएं • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	11-20

3.	भारतीय समाज के समक्ष चुनौतियाँ • दहेज • तलाक • बाल विवाह • भ्रष्टाचार • साम्प्रदायिकता • निर्धनता एवं बेरोजगारी • कमज़ोर वर्ग एवं दलित • वृद्ध और दिव्यांग • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	21-41
4.	राजस्थान में जनजातीय समुदाय • भील , मीणा, गरासिया, इत्यादि • प्रमुख समस्याएं एवं उनका कल्याण	41-53
	प्रबंधन	
1.	विपणन की आधुनिक अवधारणा, विपणन मिश्रण • उत्पाद, मूल्य, स्थान और संवर्धन • आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन, प्रचालन तंत्र, • ई वाणिज्य, ई - विपणन, व्यवसाय तथा निगम आचारनीति • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	53-86
2.	धन के अधिकतमकरण की अवधारणा, • वित्त के स्त्रोत - अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन, • पूँजी बाजार • बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ • विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI)	86-116

	• विदेशी संस्थागत निवेश • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	
3.	नेतृत्व के सिद्धांत तथा शैलियाँ • अर्थ, परिभाषा एवं प्रकार • समूह व्यवहार, • व्यक्तिगत व्यवहार, • अभिवृत्ति, मूल्य, • टीम तथा आँकलन प्रणाली • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	117-158
4.	उद्यमिता • उद्भवन • स्टार्ट अप्स • यूनिकॉर्न • उद्यम पूँजी • एंजल निवेशक • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	159-168
5.	अत्यावश्यक सेवाओं का प्रबंधन • शिक्षा प्रबंधन • हेल्थकेयर तथा वेलनेस प्रबंधन • पर्यटन तथा आतिथ्य प्रबंधन • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	169-175
	लेखांकन एवं अंकेक्षण	
1.	लेखांकन की दोहरी लेखा प्रणाली	175-217

	• पुस्तपालन (बुक कीपिंग) • रोजनामचा, खाताबही, ट्रायल बैलेंस (तलपट), • लाभ हानि खाता, आर्थिक चिट्ठा इत्यादि • वित्तीय विवरण विश्लेषण की तकनीकें • उत्तरदायित्त्व और सामाजिक लेखांकन • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	
2.	अंकेक्षण • अर्थ एवं उद्देश्य , • सामाजिक, निष्पत्ति एवं दक्षता अंकेक्षण, • सरकारी अंकेक्षण की प्रारम्भिक जानकारी ○ नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (CAG) • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	217-228
3.	निष्पादन बजट एवं शून्य आधारित बजट • मुख्य परीक्षा हेतु महत्वपूर्ण प्रश्न	229-244

समाजशास्त्र

अध्याय – 1

भारत में सामाजिक विचार

- प्रसिद्ध फ्रांसीसी दार्शनिक ऑगस्ट काम्टे ने वर्ष 1838-39 में समाजशास्त्र शब्द गढ़ा। इन्हें समाज शास्त्र का जनक कहा जाता है। समाज शास्त्र लैटिन भाषा के socius या societies तथा ग्रीक भाषा के logus से मिलकर बना है Societies का अर्थ समाज, साथी या सहयोगी होता है तथा logus का अर्थ अध्ययन या विज्ञान है, अर्थात् समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है या समाज का अध्ययन ही समाजशास्त्र है।
- समाज सामाजिक संबंधों की एक दुनिया है जो मानव अंतर -क्रियाओं एवं पारस्परिक संबंधों से जुड़ा है। एक अनुशासन के रूप में समाजशास्त्र पश्चिमी बौद्धिक प्रवचन का एक उत्पाद है।
- **मैक्स वेबर के अनुसार** – "समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो कि सामाजिक क्रिया के व्याख्यात्मक बोध को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है जिससे उसकी प्रक्रिया व प्रभावों की बुद्धिसंगत व्याख्या की जा सके।
- **गिंसबर्ग के अनुसार**- "समाजशास्त्र मानवीय अंत क्रियाओं और अंतर संबंधों, उनकी दशाओं एवं परिणामों का अध्ययन है।
- शुरुआत में यह मानव विज्ञान से जुड़ा हुआ था। हालांकि, समाजशास्त्र और मानव विज्ञान की वृद्धि तीन चरणों के माध्यम से पारित की गई।
- **प्रथम चरण** – 1773-1900 : वर्ष 1900 से पहले, समाजशास्त्र में भारतीय समाज और संस्कृति को समझने के लिए ब्रिटिश प्रशासकों के लिए उपकरण के रूप में पहचान बनाई।
- 1784 में, विलियम जोन्स ने भारत में प्रकृति और मनुष्य का अध्ययन करने के लिए बंगाल में 'द एशियाटिक सोसाइटी 'की स्थापना की ।
- **दूसरा चरण** – 1901-1950 : 20 वीं शताब्दी के शुरुआत में, पेशेवर समाजशास्त्री, जैसे हर्बर्ट रिस्ले (जनजाति / जाति), ब्राउन (अंडमान द्वीप समूह) ने भारत में जनजाति के घातक पहलुओं पर काम करना शुरू कर दिया।
- बॉम्बे, कलकत्ता, लखनऊ विश्वविद्यालयों में अनुशासन के रूप में समाजशास्त्र ने बीएन सील, जीएस घूर्ये, बीके सरकार, सधाकमल मुखर्जी, डी.पी. मुखर्जी और के.पी. चट्टोपाध्याय के योगदान के कारण उपस्थिति बनाई। हालांकि, उनके बौद्धिक हितों, डाटा संग्रह के तरीके और भारतीय सामाजिक प्रणाली एवं सामाजिक संस्थानों की उनकी व्याख्याओं को औपनिवेशिक काल में विद्वान प्रशासकों द्वारा उत्पादित नृवंशविज्ञान कार्यों से दृढ़ता प्रभावित किया गया था
- **तीसरा चरण** : (1950 आज तक) या आजादी के बाद समाजशास्त्र का विकास भारतीय विद्वानों द्वारा
- समाजशास्त्र के विस्तार या विकास का चरण 1952 से शुरू हुआ, इसके कई कारक उसके विकास के खाते में है स्वतंत्र भारत के नीति-निर्माताओं ने आर्थिक पुनर्जनन और सामाजिक विकास के उद्देश्यों का पीछा किया क्या उन्होंने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सामाजिक विज्ञान की भूमिका को पहचाना ।
- उन्होंने समाजशास्त्र की नई क्रियाओं को सामाजिक इंजीनियरिंग और सामाजिक नीति विज्ञान के रूप में बांटा।

❖ **परंपरा एवं परिवर्तन पर डी.पी. मुखर्जी के विचार :**

- परंपरा : डी.पी मुखर्जी का यह मानना था कि भारत की सामाजिक व्यवस्था ही उसका परिणात्मक एवं विशिष्ट लक्षण है और इसलिए यह आवश्यक है कि सामाजिक परंपराओं का अध्ययन हो, अर्थात् दूसरे शब्दों में भारत में सामाजिकता का बाहुल्य हैं, इसके अलावा और सबकुछ बहुत कम है। मुखर्जी का अध्ययन केवल भूतकाल तक ही सीमित नहीं, बल्कि परिवर्तन की संवेदनशीलता से भी जुड़ा था।
- अत: परंपरा एक जीवंत परंपरा थी जिसने अपने-आपको भूतकाल से जोड़ने के साथ ही साथ वर्तमान के अनुरूप भी ढाला था और इस प्रकार समय के साथ अपने-आपको विकसित कर रही थी।
- इनका मानना था कि समाजशास्त्रियों को भाषा एवं संस्कृति की पहचान हो, न केवल संस्कृत

वरमूल्य - प्रथा (दहेज-प्रथा), विधवा-विवाह पर रोक, बाल-विवाह आदि अनेक सामाजिक समस्याएं उत्पन्न हुई ।

❖ **वर्ग**

"**भारतीय समाज में वर्ग**'

समाज में आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्थाओं का समूह है। समाजशास्त्रियों के लिए विश्लेषण, राजनीतिक वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, मानव विज्ञानियों और सामाजिक इतिहासकारों आदि के लिए वर्ग एक आवश्यक वस्तु है। प्रत्येक सामाजिक वर्ग का अपना विशिष्ट सामाजिक व्यवहार, अपने निजी स्तर और व्यवसाय होते हैं। किसी वर्ग का समाज में क्या स्थान है, इस बात का निर्णय वर्ग की समाज में प्रतिष्ठा के आधार पर होता है। प्रतिष्ठा या स्थिति सामाजिक वर्ग का बुनियादी सिद्धांत है।

- **सामाजिक वर्ग की परिभाषा**

प्रमुख विद्वानों ने वर्ग की निम्न परिभाषाएँ दी है -

मेकाईवर के अनुसार, "सामाजिक वर्ग अपनी सामाजिक स्थिति के बाकि समुदायों से अलग है।

लेपियर के अनुसार, "संस्कृति के आधार पर मिले समान स्तर वाले समूह को वर्ग कहते हैं।"

गिन्सबर्ग के, "वर्ग समान वंश, व्यवसाय, धन, शिक्षा, विचारों के अनुसार, भावनाएं और व्यवहार रखने वाले लोगों का समूह है।

संक्षेप में, ऐसे लोगों का समूह जो धन, आय, व्यवसाय एवं शिक्षा जैसे कारकों के स्तरीकृत होते हैं, वर्ग कहलाते हैं ।

अर्थात् उत्पादन के साधनों के साथ जब व्यक्तियों के समान संबंध होते हैं तो ऐसे समूह को वर्ग कहा जाता है।

- **वर्गों का उदय / उत्पत्ति**

मानव इतिहास आर्थिक या उत्पादन प्रणाली के आधार पर विभिन्न अवस्थाओं में बाँटा गया। इसी आधार पर मार्क्स ने एशियाटिक, प्राचीन, सामंतवादी तथा पूंजीवादी उत्पादन के चार प्रमुख तरीके बताए। वर्ग के संबंध में इसे आदिम साम्यवादी अवस्था, दास व्यवस्था, सामंतवादी अवस्था तथा साम्यवादी अवस्था कहा गया है। इनमें से पहली अवस्थाओं जो प्रमुख हैं, उसके अनुसार, आदिम अवस्था मनुष्य समाज के इतिहास में सबसे पहली अवस्था थी और मनुष्य के संगठन का सबसे सरलतम व निम्नतम रूप था। इसमें मनुष्य काठ के डण्डों तथा पत्थरों जैसे आदिम तरीकों को अपनाकर शिकार करता था। जंगली भोजन एकत्रित कर अपना जीवन यापन करता था। धीरे-धीरे मनुष्यों ने आदिम औजारों को सुधारा और उसने आग जलाना सीखा, कृषि एवं पशुपालन करना सीखा। इस अवस्था में उत्पादन की शक्तियाँ निम्न स्तरीय थी। उत्पादन के साधनों के संयुक्त स्वामित्त्व पर आधारित थे। अतः ये संबंध परस्पर सहायता एवं सहयोग पर निर्भर थे। यह वह अवस्था थी उस समय प्रकृति के प्रकोपों और भीषण शक्तियों से मनुष्य सामूहिक रूप से मिलकर ही निपट सकता था। एक ऐसी अवस्था थी जिसमें कोई किसी का कोई मालिक अथवा सेवक नही था। सभी व्यक्ति एक समान थे। धीरे-धीरे समय के साथ-साथ मनुष्य उत्पादन तकनीक को बेहतर बनाना शुरू किया। आदिम समानता का स्थान समाज में सामाजिक असमानता ने ले लिया। इस अवस्था में पहली बार दास तथा मालिकों के रूप में परस्पर विरोधी वर्ग में अस्तित्व में आए । आदिम साम्यवादी अवस्था मे वर्ग नहीं थे तथा वर्ग बनने के साथ-साथ दूसरी अवस्था आ गई जिसे दास अवस्था कहा गया। दास अवस्था में औजारों को परिष्कृत किया गया। इस अवस्था कृषि, पशुपालन, खान उद्योग और हस्तकला जैसी विद्याओं का विकास हुआ। तकनीकी और उत्पादन की इन शक्तियों के विकास के कारण उत्पादन के संबंधों में परिवर्तन आए। इसके अनुसार मालिकों का गुलामो और गुलामों द्वारा उत्पादित वस्तुओं और साधनों पर उनके मालिकों का पूर्ण अधिकार होगा और मालिक गुलामों को उतना ही हिस्सा देते थे, जिससे की उनकी न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी हो सकें। इसी के साथ वर्ग-संघर्ष का इतिहास भी सामने आया । जिसके फलस्वरूप दास क्रांतियां हुई। परिणामतः दास प्रथा की जड़े हिल गई और एक नई अवस्था का प्रादुर्भाव हुआ जिसे सामंतवादी वर्ग या अवस्था कहा गया। समय के साथ-साथ नई प्रौद्योगिकी तथा आवश्यकताओं के कारण वृहत् स्तरीय उत्पादन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। अतः उत्पादन की नई शक्तियों ने उत्पादन के संबंधों को भी परिवर्तित किया, फलस्वरूप पूँजीवादी वर्ग अस्तित्व में आया

। भारतीय समाज वर्ग आमतौर पर तीन परतों से बना हैं (1) उच्च वर्ग (2) मध्यम वर्ग (3) निम्न

(1) **उच्च वर्ग** - व्यक्तियों का वह वर्ग या दल जो उत्कृष्ट बौद्धिक, सामाजिक, आर्थिक स्थिति का आनंद ले रहा हो या जिनकी बौद्धिक या सामाजिक या आर्थिक स्थिति उत्कृष्ट हो। ये समाज का अधिकतम धनिक व सुखी वर्ग होता है। उच्च वर्ग आमतौर पर अपार धन से प्रतिष्ठित होता है जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होता है। उच्च वर्ग की रचना करने वाली अधिकांश आबादी में कुलीन, शासक, परिवार, शीर्षक वाले लोग और धार्मिक पदानुक्रम शामिल थे।

(2) **मध्यम वर्ग** - मध्यम वर्ग में वो लोग भी शामिल होते हैं जिन्हें अन्य जगहों पर श्रमिक वर्ग कहा जाता है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप बुर्जुआ वर्ग (मध्यम वर्ग) की उत्पत्ति हुई। उद्योगपति उद्योगों में पूँजी लगाकर पूँजीपति बन गए। उद्योगों में काम करने वाले लोग श्रमिक वर्ग कहलाया / मध्यवर्ग आर्थिक दृष्टि से संपन्न न सही पर कमजोर नहीं है। वह शिक्षित भी हैं और विकासोन्मुख होना चाहता है लेकिन वह अपनी परंपराओं और रूढ़ियों से भी अपने को मुक्त नहीं कर सका है ।

(3) **निम्न वर्ग** - निम्न वर्ग को बेरोजगार वर्ग के रूप में परिभाषित किया गया है, जो राज्य द्वारा प्रदत्त लाभों पर निर्भर रहता है, समाज में निम्न वर्गों को हमेशा पीड़ित किया जाता है।

- **वर्ग के प्रकार्य / विशेषताएँ** –

(1) **समानता की भावना** - एक वर्ग के व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति समानता की भावना एक रखते हैं। सामाजिक व धार्मिक कृत्यों के अवसर पर वे अपने वर्ग के व्यक्तियों का विशेष रूप से ध्यान रखते हैं।

(2) **जन्म का महत्त्व नही** - वर्ग व्यवस्था जाति की तरह जन्म पर आधारित नहीं होती हैं। मनुष्य किसी भी वर्ग में जन्म ले, परन्तु वह किस वर्ग में रहेगा? वह उसकी कुशलता, शिक्षा, व्यवहार पर निर्भर है।

(3) **वर्ग, गतिशील है-** वर्ग मनुष्य के गुणों पर निर्भर करता है। अतः यह गतिशील है। व्यक्ति गुणों को अर्जित कर अपनी स्थिति में समय-समय पर परिवर्तन करता रहता है।

(4) **खुली व्यवस्था** - वर्ग की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि वर्ग एक खुली व्यवस्था है। मनुष्य अपने गुणों, योग्यता के बल पर निम्न वर्ग से "उच्च वर्ग में जा सकता है। इसके विपरीत कोई भी व्यक्ति अपने दुर्गुणों के कारण उच्च वर्ग से निम्न वर्ग में चला जाता है।

(5) **उच्चता एवं निम्नता की भावना** – वर्ग व्यवस्था में ऊँच नीच की भावना पाई जाती है। प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति दूसरे वर्ग के व्यक्तियों को अपने से ऊँचा या नीच समझते हैं । अपने वर्ग के प्रति सभी वर्गों में 'हम' की भावना पाई जाती हैं।

(6) **पृथक संस्कृति** – प्रत्येक वर्ग के रीति-रिवाज, रहन-सहन और आचार व्यवहार आदि का एक निश्चित ढंग होता है। सभी वर्ग इस ढंग को स्थायी बनाने का प्रयास करते हैं।

(7) **अन्तर्वर्गीय विवाह** - यद्यपि वर्ग में जाति की तरह कठोरता नहीं पायी जाती है ।

(8) **वर्ग चेतना** - वर्ग व्यवस्था की एक विशेषता यह भी है कि सामाजिक वर्ग के सदस्यों में वर्ग चेतना पाई जाती है। यही चेतना व्यक्ति के व्यवहार को निश्चित करती है।

(9) **उपवर्ग** - प्रत्येक वर्ग में उपवर्ग भी पाए जाते हैं। जैसे- सभी लोग एक वर्ग में नहीं आते। उनमें भी उच्च-उच्चवर्ग, उच्च मध्यम वर्ग एवं निम्न मध्यम वर्ग होते हैं।

(10) **समूहों का संस्तरण** - प्रत्येक समाज में वर्गों की एक श्रेणी होती है। इसमें उच्च मध्यम एवं निम्न स्तर होता है। उच्च वर्ग के सदस्यों की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं अधिकार अन्य वर्गों की में सर्वाधिक तुलना होते हैं। इसमें सदस्य संख्या कम होती हैं। निम्न वर्ग में लोगों की संख्या अधिक होती है। उनकी प्रतिष्ठा एवं अधिकार भी सबसे कम हैं।

➢ **वर्ग के समक्ष चुनौतियाँ / बाधाएँ**

(1) उच्च वर्ग पर बैठने वाले शीर्ष लोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी निम्न वर्ग के लोगों का सदियों तक शोषण करते हैं।

(2) निम्न वर्ग के दैनिक जीवन, क्रिया कलापों, विवाह संस्कार, आचार-व्यवहार आदि क्षेत्र प्रभावित होते हैं।

(3) भारतीय समाज में स्थापित उच्च-वर्ग, मध्यम वर्ग, और निम्न वर्गों के बीच शिक्षा की असमानता स्पष्ट दिखाई देती है ।

(4) ये व्यवस्था आर्थिक, मानसिक शारीरिक विकास में बाधक होती हैं ।
(5) वर्गों को ध्यान में रखकर मनुष्यों के बीच पक्षपात दृष्टिगोचर होता है।
(6) एक वर्ग के सदस्य दूसरे वर्ग के सदस्यों के साथ सीमित सामाजिक संबंध स्थापित कर एक निश्चित दूरी बनाए रखते हैं
(7) वर्गों के निर्माण में संपत्ति का प्रमुख स्थान हैं।
(8) वर्ग निर्माण का आधार शारीरिक श्रम हैं ।
(9) हर वर्ग की एक अलग जीवन शैली होती है।

➢ **जाति और वर्ग में अंतर**

(1) वर्ग की सदस्यता योग्यता पर निर्भर करती है, जाति की सदस्यता जन्म पर निर्भर करती हैं।
(2) वर्ग में व्यक्ति कोई भी व्यवसाय अपना सकता है, जाति में व्यक्ति का पेशा उसके वंश या जाति के अनुसार होता है।
(3) वर्ग की कोई पंचायत नहीं होती, जाति की अपनी जाति पंचायत होती है।
(4) जाति-व्यवस्था स्थिर है जबकि वर्ग प्रणाली गतिशील
(5) जाति व्यवस्था एक कार्बनिक प्रणाली है लेकिन वर्ग खंडीय चरित्र होता है, जहाँ विभिन्न खंड प्रतिस्पर्धा से प्रेरित है।
(6) जाति एक सक्रिय राजनीतिक शक्ति के रूप काम करती है, लेकिन वर्ग ऐसा नहीं करता है।
(7) जाति व्यवस्था एक 'बंद व्यवस्था' है और वर्ग-व्यवस्था 'एक खुली व्यवस्था' है।
(8) वर्ग- व्यवस्था में, विभिन्न वर्गों के लोगों बीच अंतर-भोजन और अंतर विवाह पर कोई औपचारिक प्रतिबंध नहीं है जबकि जाति-व्यवस्था में यह प्रतिबंध है।
(9) वर्ग-व्यवस्था में व्यक्ति अपनी योग्यता से अपना वर्ग बदल है, जाति में व्यक्ति ये नहीं कर सकता है।
(10) वर्ग की कोई कानूनी मान्यता नहीं होती और ना ही वे धर्म द्वारा पोषित होते हैं।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

गत परीक्षा में पूछे गये प्रश्न :-

प्रश्न-1. जाति व्यवस्था असमानता का उदाहरण क्यों है ? [**RAS** - 2021]

प्रश्न-2. वैश्विक गाँव क्या है ? [**RAS** - 2021]

प्रश्न-3. जाति एक अन्तर्विवाही समूह है कैसे ? [RAS - 2018]

प्रश्न-4. सामाजिक विचार धारा क्या है ? [**RAS** - 2018]

प्रश्न-5. एम.एन श्रीनिवास द्वारा प्रभुजाति को स्पष्ट करने हेतु कौनसे लक्षण बताए गए हैं ? [**RAS** - 2018]

प्रश्न-6. जी एस धुरिये द्वारा प्रदत्त जाति की विशेषताओं का वर्णन कीजिए ? [**RAS** - 2016]

INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – 3

भारतीय समाज के समक्ष चुनौतियाँ

भारतीय समाज के समक्ष चुनौतियाँ :- ब्रिटिश औपनिवेशक शासन के खिलाफ एक लम्बे स्वतंत्रता संग्राम के बाद 15 अगस्त 1947 को भारत ने खुद को स्वतंत्र राष्ट्र–राज्य के रूप में मूर्त रूप दिया और खुद को एक संविधान दिया जिसने भारत को सरकार की संसदीय प्रणाली के साथ एक संप्रभु , समाजवादी , धर्मनिरपेक्ष , लोकतांत्रिक गणराज्य बनाया । तब से भारतीय विकास की कहानी ने सभी क्षेत्रों में शानदार वृद्धि अर्जित की है , फिर भी ऐसी कई चुनौतियाँ हैं जिनका भारत आज अपने दैनिक सामाजिक जीवन में सामना करता है , जो एक तरह से आपस में जुड़ी हुई है ।

भारत जिन प्रमुख चुनौतियों का सामना कर रहा है, उनमें से कुछ प्रमुख है, गरीबी, प्रदूषण, निरक्षरता, भ्रष्टाचार, असमानता, लैंगिक भेदभाव, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, बेरोजगारी, क्षेत्रवाद, जातिवाद, शराब, नशीली दवाओं का दुरुपयोग, महिलाओं के खिलाफ हिंसा ।

यदि व्यवस्थित रूप से चर्चा की जाए तो चुनौतियों को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है, यह समाज के उस उस हिस्से के आधार पर उन्हें अलग करके किया जा सकता है जो वे सबसे अधिक प्रभावित कर रहे हैं और फिर उन चुनौतियों को स्पर्श कर रहे हैं जो पूरे समाज को प्रभावित करती हैं ।

कुछ प्रमुख चुनौतियाँ :-

1. बाल श्रम
2. कुपोषण
3. निरक्षरता
4. बालिकाओं के खिलाफ लैंगिक पूर्वाग्रह
5. बाल शोषण
6. बाल तस्करी
7. किशोर अपराध
8. मादक पदार्थों का सेवन
9. महिला और स्वास्थ्य
10. महिला हिंसा
11. लैंगिक भेदभाव
12. बेरोजगारी
13. जातिव्यवस्था
14. क्षेत्रवाद
15. धर्मनिरपेक्षता
16. फेक न्यूज का खतरा
17. गरीबी
18. डिजिटल डिवाइड
19. प्रदूषण

200 वर्षों की गुलामी के बाद ब्रिटिश राज से 15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतंत्रता प्राप्त की हुई। एक नए स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत का उदय, भारत के लोगों के लिए एक महत्त्वपूर्ण क्षण था। आजादी के समय भारत को कई सम-विषम परिस्थितियो का सामना करना पड़ा। इन परिस्थितियों के बीच नए राष्ट्र के रूप में भारत के समक्ष कुछ चुनौतियाँ खड़ी हुई। जब तक इन सभी का निवारण नहीं हो जाता तब तक भारत सम्पूर्ण विकास नहीं कर सकता है और न ही शुद्ध रूप से लोकतंत्र की स्थापना हो सकती है ।

❖ **दहेज प्रथा** –

मानव समाज एवं सभ्यता के समक्ष कई सारी चुनौतियाँ खड़ी हुई हैं, परंतु इनमें से एक चुनौती ऐसी है, जिसका कोई भी हल अभी तक दिखाई नहीं दे रहा है। विवाह संस्कार से जुड़ी हुई यह सामाजिक विकृति दहेज प्रथा हैं। दहेज कुप्रथा भारतीय समाज के लिए एक भयंकर अभिशाप की तरह हैं। 'दहेज' शब्द अरबी भाषा के 'दहेज' शब्द से रूपान्तरित होकर उर्दू और हिन्दी में आया है, जिसका अर्थ होता है" सौगात"।

प्राचीन ग्रंथों के अनुसार, अग्निकुंड के समक्ष शास्त्रज्ञ विद्वान विवाह सम्पन्न कराता था तथा कन्या का हाथ वर के हाथ में देता था। कन्या के माता-पिता अपनी सामर्थ्य और शक्ति के अनुरूप कन्या के प्रति अपने स्नेह और वात्सल्य के प्रतीक के रूप में कुछ उपहार भेंट स्वरूप दिया करते थे। इसके लिए 'वस्त्रभूषणालंकृताम्' शब्द का प्रयोग सार्थक रूप में प्रचलित था। इस प्रथा के पीछे लाभ की दुष्प्रवृत्ति छिपी हुई है। आज दहेज प्रथा भारत के सभी क्षेत्रों और वर्गों में व्याप्त हैं। इस कुप्रथा के चलते कितने लड़की वाले बेघर एवं बर्बाद हो रहे हैं। कितनी वधूएं के दहेज की खातिर जीवित जला कर मारी जा रही है। इस कुप्रथा ने लड़कियों के पिता का जीवन दूभर कर दिया है।

इतिहास के पन्नों पर नजर डाले तो यह प्रमाणित होता है कि दहेज़ का जो रूप आज हम देखते है कि

तुरंत गिरफ्तारी साबित होने पर कड़ी सजा का प्रावधान हैं ।

कहाँ करें शिकायत - यदि आप या आपका कोई रिश्तेदार दहेज़ संबंधी उत्पीड़न का सामना कर रहा है तो आप इन कानूनों के अंतर्गत शिकायत दर्ज करवा सकते हैं।

(1) नजदीकी पुलिस स्टेशन या महिला थाना में जाकर या फोन के माध्यम से
(2) 181 महिला हेल्पलाइन पर ।
(3) वन स्टॉप सेंटर पर जाकर ।
(4) कोर्ट में केस दर्ज करवा कर ।

➢ **दहेज के कारण**

(1) जीवन साथी चुनने का सीमित क्षेत्र - जब कन्या का विवाह अपने ही वर्ण, जाति या उपजाति में करना होता है तो विवाह का दायरा बहुत सीमित हो जाता हैं। योग्य वर के लिए दहेज देना आवश्यक हो जाता है ।
(2) बाल-विवाह - बाल-विवाह के कारण वर एवं वधू का चुनाव उनके माता- पिता द्वारा किया जाता है और वे अपने लाभ के लिए दहेज की माँग करते हैं।
(3) विवाह की अनिवार्यता - हिन्दुओं में कन्या का विवाह अनिवार्य माना गया हैं। इसका लाभ उठाकर वर-पक्ष के लोग अधिकाधिक दहेज की मांग करते हैं।
(4) कुलीन विवाह - कुलीन विवाह के कारण ऊँचे कुलों के लड़कों की माँग बढ़ जाती है और उन्हें प्राप्त करने के लिए कन्या पक्ष को दहेज को देना होता है।
(5) शिक्षा एवं सामाजिक प्रतिष्ठा - वर्तमान समय में शिक्षा एवं व्यक्तिगत प्रतिष्ठा का अधिक महत्त्व होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपनी कन्या का विवाह शिक्षित एवं प्रतिष्ठित लड़के के साथ करना चाहता है, जिसके लिए उसे काफी दहेज देना होता हैं।
(6) धन का महत्त्व - जिस व्यक्ति को अधिक दहेज प्राप्त होता है, उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ जाती हैं।
(7) महंगी शिक्षा - वर्तमान में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए काफी धन खर्च करना पड़ता हैं। जिसे जुटाने के लिए वर पक्ष के लोग दहेज की मांग करते हैं। शिक्षा के लिए, लिए गए ऋण का भुगतान भी कई बार दहेज द्वारा किया जाता हैं।
(8) दुष्चक्र - दहेज एक दुष्चक्र हैं जिन लोगों ने अपनी लड़कियों के लिए दहेज दिया हैं, वे भी अवसर आने पर अपने लड़कों के लिए दहेज़ प्राप्त करना चाहते हैं। इसी प्रकार लड़के के लिए दहेज प्राप्त करके वे अपनी लड़कियों के विवाह के लिए उसे सुरक्षित चाहते है।

दहेज़ - प्रथा के दुष्परिणाम -

(1) बालिका वध - दहेज की अधिक माँग होने के कारण कई व्यक्ति कन्या को पैदा होते ही मार डालते हैं ।
(2) कम दहेज़ देने पर कन्या को सुसुराल में अनेक प्रकार के कष्ट दिए जाते हैं। दोनों परिवार में तनाव एवं संघर्ष पैदा होते हैं और पति-पत्नी का सुखी वैवाहिक जीवन में तनाव में आता है।
(3) जिन लड़कियों को अधिक दहेज नहीं दिया जाता हैं, उनको कई प्रकार से तंग किया जाता है। इस स्थिति से मुक्ति पाने के लिए लड़कियाँ आत्महत्या तक कर लेती हैं। कई बार कम दहेज के कारण लड़कियों की हत्या तक हो जाती है या फिर उन्हें जलाकर मार दिया जाता है।
(4) दहेज देने के लिए कन्या के पिता को रुपया उधार लेना पड़ता है या अपनी जमीन, जेवरात मकान आदि को गिरवी रखना पड़ता है या बेचना पड़ता है। अधिक कन्याएँ होने पर तो आर्थिक दशा और ज्यादा बिगड़ती हैं।
(5) **बेमेल विवाह** जैसे दुष्परिणाम सामने आते है। दहेज के अभाव में कन्या का विवाह अशिक्षित, वृद्ध, कुरूप, अपंग एवं अयोग्य व्यक्ति के साथ भी करना पड़ता है।
(6) दहेज के अभाव में कई लोग अपने वैवाहिक संबंध कन्या पक्ष से समाप्त कर देते हैं। कई बार तो दहेज के अभाव में तोरण द्वार से बारात वापस लौट जाती हैं।
(7) दहेज जुटाने के लिए कई अपराध भी किए जाते हैं। रिश्वत, चोरी एवं गबन द्वारा धन एकत्र किया जाता है। भ्रष्टाचार में भी वृद्धि होती है ।
(8) दहेज एकत्रित करने एवं योग्य वर की तलाश में माता- पिता चिन्तित रहते हैं। चिन्ता के कारण कई मानसिक बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं।
(9) दहेज के कारण स्त्रियों की सामाजिक स्थिति गिर जाती है। उनका जन्म अपशकुन माना जाता है एवं उन्हें विपत्ति का सूचक माना जाता है।

❖ दहेज-प्रथा को समाप्त करने हेतु सुझाव

(1) **स्त्री शिक्षा** - स्त्री शिक्षा का अधिकाधिक प्रसार किया जाए ताकि वे पढ़-लिखकर स्वयं कमाने लगे। ऐसा होने पर उनकी पुरुषो पर आर्थिक - निर्भरता समाप्त होगी।

(2) **जीवन-साथी के चुनाव की स्वतंत्रता** - लड़के व लड़कियों को अपना जीवन-साथी स्वयं चुनने की स्वतंत्रता प्राप्त होने पर अपने आप दहेज प्रथा समाप्त हो जायेगी।

(3) **अन्तर्जातीय विवाह** - अन्तर्जातीय विवाह की छूट होने पर विवाह का दायरा विस्तृत होगा। परिणामस्वरूप दहेज प्रथा समाप्त हो सकेगी।

(4) **स्वस्थ जनमत** - दहेज विरोधी जनमत तैयार किया जाए। लोगों में जागृति पैदा की जाए, जिससे कि वे दहेज का विरोध करे। इसके लिए अधिकाधिक प्रचार एवं प्रसार के साधनों का उपयोग किया जाए। समाज-सुधारकों एवं युवकों द्वारा इस ओर अपने विशेष प्रयत्न किए जानें चाहिए।

(5) **दहेज विरोधी कानून** - दहेज-प्रथा की समाप्ति के लिए कठोर कानूनों का निर्माण किया जाए एवं दहेज मांगने वालों की कड़ी से सजा दी जाए। वर्तमान में "दहेज निरोधक अधिनियम 1961" लागू है, परन्तु यह अधिनियम अपनी कई कमियों के कारण दहेज-प्रथा को कम करने में असफल रहा है। वर्तमान में इस अधिनियम को संशोधित कर इसे कठोर बना दिया गया है।

❖ तलाक

तलाक या विवाह-विच्छेद एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके तहत पति-पति एक दूसरे को सभी वैवाहिक बंधन से मुक्त करतें है।

तलाक (हिन्दू विवाह अधिनियम 1955)

भारत सरकार द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 लागू किया। भारत सरकार द्वारा 1976 एवं 1951 में संशोधन किए एवं इस प्रक्रिया को विस्तृत रूप दिया गया। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 के अन्तर्गत स्त्री या पुरुष दोनों ही तलाक के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं। यह अधिनियम हिन्दुओं, सिक्खों, बोंध धर्म माननें वाले और उन सब व्यक्तियों पर लागू होता है, जो मुस्लिम, पारसी, ईसाई या यहूदी न हों।

इस अधिनियम की धारा 13 के अन्तर्गत निम्न आधारों पर यह आवेदन किया जा सकता है।

यदि दोनों पक्षों में से कोई भी :-

1. शादी के बाद अपनी इच्छा से किसी दूसरे व्यक्ति के साथ शारीरिक संबन्ध स्थापित करता हो।

2. शादी के बाद अपने साथी के साथ मानसिक या शारीरिक क्रूरता का व्यवहार करता हो।

3. यदि कोई आवेदन को दो वर्ष पहले से उसके साथ रहना छोड़ दिया हो जब तक कोई ठोस कारण न रहा हो।

4. दोनों पक्षों में से यदि कोई एक हिन्दु धर्म छोड़कर दूसरा धर्म अपना लेता हो।

5. यदि दोनो में से कोई भी एक पक्ष पागल हो और उसके साथ वैवाहिक जीवन जीना संभव नहीं हो।

6. अगर दोनों में से कोई एक कुष्ठ रोग से ग्रसित हो।

7. पति या पत्नी में से कोई एक संक्रामक यौन रोग से पीड़ित हो।

8. अगर वह अपने परिवार को छोड़कर सन्यास ले ले।

9. अगर उसके किसी भी रिश्तेदार या दोस्त को उसके जिन्दा होने की कोई भी खबर सात साल तक न मिली हो।

इनके अलावा निम्न आधारों पर पत्नी तलाक ले सकती है।

1. अगर पति शादी के बाद बलात्कार का दोषी हो।

2. अगर शादी के समय पत्नी की उम्र 15 वर्ष से कम रही हो तो वह 18 वर्ष की होने से पहले तलाक ले सकती हैं।

आपसी सहमति से तलाक लेना :-

आपसी सहमति से दोनों तलाक ले सकते हैं, परन्तु इसके लिए आवेदन शादी के एक साल बाद ही न्यायालय में दिया जा सकता है।

दलित आंदोलन और हिन्दुत्व

दलित आंदोलन भारत में दलितों की स्थिति में सामाजिक राजनीतिक परिवर्तन लाने के लिए एक विरोध आंदोलन के रूप में शुरू हुआ था।

स्वतंत्रतापूर्व भारत में दलित आंदोलन

(1) **भक्ति आंदोलन** - यह आदोलन 15 शताब्दी में प्रसिद्ध आंदोलन है। इस आंदोलन ने दो प्रथायें चलाई- सगुण और निर्गुण। इन आंदोलनों के माध्यम से धार्मिक नैतिकता की समतावाद के घोषणापत्र के रूप में पुनर्व्याख्या हुई। इस आंदोलन ने दलित की भावी पीढ़ियों के लिए इन रुढ़िवादी हिन्दू धर्म के विरोध के साधन प्रदान किए।

(2) **नव-वेद्धांतिक आंदोलन** - इस आंदोलन की शुरुआत हिन्दू धर्म गुरुओं और समाज सुधारकों द्वारा की गई थी। इन आंदोलनों में दलितों के जाति व्यवस्था के घेरे में लाकर अस्पृश्यता के अंत का प्रयास किया। दलितों ने अस्पृश्यता से छुटकारा पाने के उद्देश्य से और अपनी सामाजिक और वित्तीय स्थितियों को विकसित करने के लिए धर्मान्तरण के मार्ग का भी अनुसरण किया था। महात्मा ज्योतिबा फुले ने ब्राह्मणवाद के चंगुल से गैर-ब्राह्मणों को मुक्त करने के उद्देश्य से 1873 में सत्यशोधक मंडल का गठन किया । 1912 में कोल्हापुर शोधक मण्डल के शाहू महाराज ने फुले, द्वारा शुरू किए गए आंदोलन को आगे बढ़ाया ।

(3) **संस्कृतिकरण आंदोलन** - संस्कृतिकरण को ऐसी प्रक्रिया के में रूप परिभाषित किया जा सकता है, जिसके द्वारा "एक निम्न या मध्यम हिन्दू जाति, जनजाति या अन्य समूह अपनी प्रथाओं रीति-रिवाजों और जीवन शैली में उच्च और द्विज की दिशा में परिवर्तित करते हैं।" दलित नेताओं ने खुद को जाति पदानुक्रम में उच्च स्थान पर रखने के लिए संस्कृतिकरण की प्रक्रिया का अनुसरण किया।

1920 के दशक के दौरान हुआ जब दलितों नें भारत के कई क्षेत्रों में जोरदार एवं स्वतंत्र रूप से संगठित होना शुरू कर दिया था। इस प्रकार प्रारंभिक दलित आंदोलनों में सबसे महत्त्वपूर्ण थे। पंजाब में आदि धर्म आंदोलन 1925 किया, अम्बेडकर के नेतृत्व में महाराष्ट्र में आन्दोलन हुआ जो मुख्य रूप से महारों के मध्य आधारित था। 1924 में इसकी संगठनात्मक शुरुआती दशा थी । बंगाल में नामाशुद्र आंदोलन, तमिलनाडू में आदि- द्रविड़ आंदोलन, आदि कर्नाटक आंदोलन, आदि हिन्दू आंदोलन जो मुख्य रूप से यू.पी. में कानपुर के आस-पास केंद्रित था, और इसके अलावा यह आंदोलन केरल के पुलाया और चेरुमानस में देख सकते ।

दलित आंदोलन में गाँधी जी का योगदान

गाँधी जी इस बात के पक्षधर थे कि राष्ट्र का विकास और निर्माण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इसे अछूतों की सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठा करके ही हासिल किया जा सकता है। गाँधी जी ने 1932 में जेल में रहते हुए 'हरिजन सेवक संघ' की नींव रखी थी। यह संगठन कांग्रेस का हिस्सा नही था। यह 1932 में गाँधी जी के द्वारा जेल में शुरू किए उपवास का परिणाम था।

अम्बेडकर का दलित आंदोलन में योगदान

अंबेडकर ने अप्रैल 1927 में मराठी पाक्षिक बहिष्कृत भारत और साप्ताहिक जनता 1932 में प्रारम्भ किए। सितम्बर 1927 में उन्होंने हिन्दू जाति और अस्पृश्ता के बीच सामाजिक समता की हिमायत के लिए **समाज समता संघ** आरम्भ किया। उन्होंने अन्तर्जातीय भोज अंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया। उन्होने मार्च 1929 में एक अन्य पत्र 'समता' प्रकाशित किया। अम्बेडकर ने दूसरा सत्याग्रह मार्च 1930 में नासिक के प्रसिद्ध मंदिर 'कालाराम' में अछूत के प्रवेश के अधिकार को स्थापित करने के लिए किया। अप्रैल 1942 से 1946 तक उन्होंने अपनी गतिविधियों का विस्तार किया और सम्पूर्ण भारत के राजनैतिक दल के रूप में शैड्यूल्ड कास्टस फैडरेशन की स्थापना की। अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति आदि के लिए केन्द्रीय सरकार से अनुदान लिया और केंद्रीय और राज्यस्तरीय नौकरियों में उनके लिए आरक्षण लिया।

आजादी के बाद के दलित आंदोलन

(1) डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और बौद्ध दलित आंदोलन– डॉ. बी. आर. अम्बेडकर दलित आंदोलन का अग्रणी व्यक्तित्व है। अम्बेडकर अपने जीवन का हर पल दलितों के उत्थान के लिए सोचते और संघर्ष को समर्पित बलिदान कर दिया। 15 अगस्त, 1947 को अम्बेडकर देश के पहले कानून मंत्री नियुक्त हुए। अम्बेडकर ने अस्पृश्यता का उन्मूलन किया और हर प्रकार के भेदभाव को गैर कानूनी

बताया। अम्बेडकर ने महिलाओं के लिए आर्थिक और सामाजिक अधिकारों के लिए लड़ाई की। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए विद्यालय व महाविद्यालय, नागरिक सेवाओं में नौकरियों के आरक्षण के लिए उन्होंने सभा का सहयोग भी प्राप्त किया जो एक प्रकार की सकारात्मक गतिविधि थी।

बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण

अम्बेडकर बौद्ध धर्म के पक्षधर थे। 1950 में उन्होंने अपना ध्यानपूर्ण रूप से बौद्ध धर्म पर केन्द्रित किया और एक सभा 'वर्ल्ड फैलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट में भाग लेने श्रीलंका गए। 1955 में उन्होंने भारतीय बुद्ध महासभा का गठन किया। अम्बेडकर ने अपनी पत्नी के साथ बौद्ध धर्म में धर्मांतरण किया। अम्बेडकर के अनुसार बौद्धधर्म के नैतिक सिद्धांत दो महान उद्देश्यों को पूर्ण करते थे। पहला राजनैतिक क्षेत्र में ये दलितों के लिए असाम्प्रदायिक विचारधारा उत्पन्न करने में और दूसरा हिंसक राजनीति के अन्य विद्यमान परिप्रेक्ष्यों विरुद्ध एक पहचान उत्पन्न करने में ।

(2) **दलित पैंथर्स** - दलित पैन्थर आंदोलन एक नव-सामाजिक आंदोलन था । जिसने सैद्धांतिक रूपरेखा के लिए अंबेडकर के दर्शन को स्वीकार किया। दलित पैंथर्स एक ऐसी सामाजिक संस्था थी, जो जातिगत भेदभाव के विरुद्ध लड़ती थी। इसकी स्थापना 29 मई, 1972 में नामदेव और जे. वी. पवार ने महाराष्ट्र राज्य में की। दलित पैंथर्स आंदोलन क्रांतिकारी दृष्टिकोण के कारण पूर्व के दलित आंदोलनों से अलग एक कट्टर आंदोलन था । जिनका आरंभिक जोर आतंकवाद और क्रांतिकारी दृष्टिकोण पर था।

(3) **काशी राम का योगदान** - 1973 में कांशीराम ने 'पिछड़ी अल्पसंख्यक समुदाय कर्मचारी संघ' की स्थापना की जिसका ध्येयवाक्य था " शिक्षित बनों, संगठित हो और संघर्ष करो।' काशीराम अपने सम्पर्क क्षेत्र को बढ़ाते हुए लोगों को जाति व्यवस्था की असलियत से अवगत कराते रहे। 1980 में काशीराम ने 'अंबेडकर मेला' के रूप में रोड़ शो आयोजित किया। जिसमें चित्रों और वर्णन के द्वारा अंबेडकर के जीवन और विचारों को प्रतिबिंबित किया गया। काशीराम ने 1981 में दलित शोषित समाज संघर्ष समिति की स्थापना की।

(4) मायावती प्रभुदास – मायावती ने भारतीय समाज के दुर्बलतम स्तर पर रहने वाले बहुजनों तथा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग को और धार्मिक अल्पसंख्यकों के जीवन में सुधार के लिए सामाजिक परिवर्तन को मंच बनाने पर जोर दिया। मायावती के नेतृत्व में, सरकार ने निम्नलिखित निर्णय लिए, जैसे-

- पिछले बकाया आरक्षित पदों पर नियुक्ति के लिए विशेष अभियान
- निजी उद्यमों में अनुसूचित जाति / जनजाति के लिए आरक्षण के प्रावधान
- अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्रवृत्तियों में पारदर्शिता के लिए कंप्यूटरीकरण
- शहरी निर्धनों के घर की सुविधा के लिए श्री काशीराम शहरी गरीब आवास योजना
- महामाया गृह योजना
- दलितों के लिए सामूहिक केन्द्र
- जननी सुरक्षा योजना

दलित महिलाओं का आंदोलन

जनवरी 1928 में, बोम्बे में रमाबाई अंबेडकर, डॉ. अंबेडकर की पत्नी की अध्यक्षता में एक महिला संघ की स्थापना की। 1993 में 'रुथ मनोरमा द्वारा' द नेशनल फेडरेशन ऑफ दलित महिला का गठन किया गया। इसने दलित महिला संगठन को दलित महिला हिंसा के खिलाफ आवाज बुंलद की और जाति के प्रश्न का गंभीरतापूर्वक हल निकाला। रमाबाई अम्बेडकर, श्रीमती अंजनीबाई देशभ्रतार, श्रीमती गीताबाई गायकवाड़, श्रीमती कीर्तिबाई पाटिल, सुलोचनाबाई डोगरे दलित महिला आंदोलन के मुख्य समर्थक थे। दलित नारीवादियों ने दलित महिलाओं के तीन तरफा शोषण को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था।

जो इस प्रकार हैं –

- उच्च जातियों द्वारा दबाया गए दलित
- मुख्य रूप से उच्च जातियों के स्वामियों के हाथों उत्पीड़ित कृषि कामगार वर्ग
- महिलाओं का सभी पुरुषों द्वारा पितृसत्तात्मक उत्पीड़न जिससे उनकी स्वयं की जाति के पुरुष सम्मिलित

दलित महिला आंदोलन के वर्तमान लक्ष्य

- महिलाओं के कार्य में जातिगत समीकरणों को बदलने ।

प्रभाव छोड़ा है और व्यापार मूल्यों का सृजन किया है। इसके उदाहरणों में शामिल हैं:-

- इस्लामी बैंकिंग, ऋणों पर ब्याज वर्जित करने के साथ जुड़े ।
- पारंपरिक लोकलाज के कारण लाभ के मकसद की अस्वीकृति ।
- निष्पक्ष व्यवहार के लिए पंचों की गवाही

अभ्यास प्रश्न

गत परीक्षा में पूछे गये प्रश्न :-

1. आपूर्ति श्रंखला प्रबंधन (एस.सी.एम.) को परिभाषित करें ? [RAS – 2021]
2. संधारनीय विपणन विचार को संक्षेप में समझाइये ? [RAS – 2018]
3. सेवाओं की कोई चार विशेषताओं को चिह्नांकित कीजिए ? [RAS – 2021]
4. सेवा हेतु विपणन समिश्र में क्या समाहित है ? [RAS – 2016]
5. ए. एच मस्लो के अनुसार आवश्यकता – क्रम बध्यता सिद्धांत की व्याख्या करें ?
6. चक्र श्रृंखला एवं वृत्त सूचना तंत्र समझाइये ? [RAS – 2016]
7. उत्पाद जीवन चक्र की विभिन्न अवस्थाओं को समझाइये ? [RAS – 2016]

अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न :-

1. आधुनिक विपणन अवधारणा की परिभाषा दीजिए आधुनिक विपणन अवधारणा के आधारभूत स्तम्भ क्या हैं ?
2. विपणन की प्रकृति एवं क्षेत्र की विवेचना कीजिए ?
3. विपणन की विकासशील अर्थव्यवस्था में अवधारणा की भूमिका का वर्णन कीजिए ?
4. विपणन अवधारणा से आप क्या समझते हैं । उत्पादन उन्मुख अवधारणा और ग्राहक उन्मुख अवधारणा के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए ।
5. आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन तथा प्रचालन तंत्र को स्पष्ट करें ?
6. ई-कॉमर्स को समझाइये ?
7. ई-कॉमर्स के लाभ एवं हानियाँ बताइये ?
8. व्यावसाहिक नैतिकता की अवधारणा बताइये ?
9. व्यावसाहिक नैतिकता पर धार्मिक विचारों का उल्लेख करे ?

अध्याय – 2

धन के अधिकतमकरण की अवधारणा

❖ वित्त के स्त्रोत – अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन

धन के अधिकतमीकरण की अवधारणा एवं उद्देश्य (Concept and purpose of maximization of wealth)

धन के अधिकतमीकरण की अवधारणा एवं उद्देश्य (Concept and purpose of maximization of wealth)

- धन के अधिकतमीकरण से अभिप्राय अंश धारकों के धन को अधिकतम करने से होता है।अंश धारकों के धन का अधिकतमीकरण कंपनी के शुद्ध मूल्य पर निर्भर करता है। एक कंपनी का शुद्ध मूल्य जितना अधिक होता है उसके अंशों का बाजार मूल्य उतना ही अधिक होता है एवं अंशों का अधिकतम बाजार मूल्य ही अंश धारकों के धन को अधिकतम करता है। इसलिए कई बार धन के अधिकतमीकरण को शुद्ध मूल्य का अधिकतमीकरण भी कहा जाता है।
- धन के अधिकतमीकरण की अवधारणा वित्तीय प्रबंध का एक आधुनिक दृष्टिकोण है।
- धन के अधिकतमीकरण की अवधारणा से पूर्व लाभों का अधिकतमीकरण व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य माना जाता था परंतु यह अवधारणा अधिक विस्तृत एवं व्यापक रूप से व्यवसाय के लक्ष्यों पर अपना ध्यान केंद्रित करती है।
- धन से अभिप्राय व्यवसाय के मूल्य से है दूसरे अर्थ में व्यवसाय में लगी अंश धारकों की अंश पूंजी के बाजार मूल्य से लगाया जाता है।

धन अधिकतमीकरण के सिद्धांत- धन अधिकतमीकरण के सिद्धांत को निम्न कारणों से लाभ के अधिकतमीकरण सिद्धांत से श्रेष्ठ माना जाता है-

1. यह सिद्धांत लाभों पर आधारित ना होकर भावी रोकड़ अंतर्वाही पर आधारित है। रोकड़ अंतर्वाह गणना की दृष्टि से लाभों से अधिक व्यापक एवं स्पष्ट अर्थ रखते हैं।

2. लाभों के अधिकतमीकरण की अवधारणा धन के अधिकतमीकरण की तुलना में अल्पकालीन अवधि पर आधारित है जबकि धन का अधिकतमीकरण दीर्घकालीन परिदृश्य पर आधारित है एवं संपूर्ण रोकड़ अंतर्वाहों की वर्तमान लागत से तुलना करता है।
3. धन का अधिकतमीकरण की अवधारणा रुपए के वर्तमान मूल्य का ध्यान रखती है।
4. धन के अधिकतमीकरण के अंतर्गत जोखिम एवं अनिश्चितता के संबंध में भी बट्टे की दर में प्रावधान किया जाकर वर्तमान मूल्य ज्ञात किए जा सकते हैं।

धन के अधिकतमीकरण के उद्देश्य (The purpose of maximizing wealth)

1. अंशधारियों के अंशो के मूल्य में वृद्धि करना।
2. कंपनी के शुद्ध मूल्य का अधिकतम करना।
3. वित्तीय निर्णयों को अधिक व्यापकता प्रदान करना।
4. व्यवसाय की दीर्घकालीन सुस्थिरता बढ़ाना।
5. विनियोग पर अधिकतम प्रत्याय प्राप्त करना।

निम्नलिखित तर्क वित्तीय प्रबंधन के लक्ष्य के रूप में धन अधिकतमकरण के पक्ष में उन्नत हैं:

(i) यह मालिकों, (शेयरधारकों) और फर्म में अन्य हितधारकों के हितों की सेवा करता है; यानी ऋणग्रस्त पूंजी, कर्मचारियों, लेनदारों और समाज के आपूर्तिकर्ता।
(ii) यह मालिकों के आर्थिक कल्याण के उद्देश्य के अनुरूप है।
(iii) धन अधिकतमकरण का उद्देश्य फर्म (कंपनी , व्यवसाय) के लंबे समय तक जीवित रहने और विकास को दर्शाता है।
(iv) यह जोखिम कारक और धन के समय के मूल्य को ध्यान में रखता है क्योंकि क्रिया के किसी विशेष पाठ्यक्रम के वर्तमान वर्तमान मूल्य को मापा जाता है।
(v) शेयरों के बाजार मूल्य पर लाभांश नीति के प्रभाव को भी माना जाता है क्योंकि शेयरों के बाजार मूल्य को बढ़ाने के लिए निर्णय लिए जाते हैं।
(vi) धन अधिकतमकरण का लक्ष्य प्रति शेयरधारक के शेयर में वृद्धि के माध्यम से शेयरधारक की उपयोगिता या मूल्य शेयरधारकों के अधिकतम मूल्य को अधिकतम करने की ओर जाता है।

<u>धन अधिकतमकरण की आलोचना</u>:-

मुख्य रूप से निम्नलिखित खातों पर कुछ वित्तीय सिद्धांतकारों द्वारा धन अधिकतमकरण के उद्देश्य की आलोचना की गई है:

(i) यह एक निर्धारित विचार है। उद्देश्य यह नहीं है कि फर्म वास्तव में क्या करती है।
(ii) धन अधिकतमकरण का उद्देश्य सामाजिक रूप से वांछनीय नहीं है।
(iii) इस बात पर कुछ विवाद है कि क्या इसका उद्देश्य स्टॉकहोल्डर्स के धन या फर्म की संपत्ति को अधिकतम करना है जिसमें अन्य वित्तीय दावेदार जैसे डिबेंचर-धारक, पसंदीदा स्टॉकहोल्डर इत्यादि शामिल हैं।
(iv) संपत्ति के अधिकतमकरण का उद्देश्य भी कठिनाइयों का सामना कर सकता है जब स्वामित्व और प्रबंधन को अलग कर दिया जाता है जैसा कि अधिकांश बड़े कॉर्पोरेट रूप में संगठनों में होता है। जब प्रबंधक वास्तविक मालिकों (इक्विटी शेयरधारकों) के एजेंट के रूप में कार्य करते हैं, तो शेयरधारकों और प्रबंधकीय हितों के बीच हितों के टकराव की संभावना होती है।

प्रबंधक इस तरह से कार्य कर सकते हैं जो प्रबंधकीय उपयोगिता को बढ़ाता है, लेकिन स्टॉकहोल्डर्स या फर्म के धन को नहीं।

तमाम आलोचनाओं के बावजूद, हमारा विचार है कि शेयर बाजार और डिबेंचर-धारकों, फर्म और सोसायटी और स्टॉकहोल्डर्स और मैनेजरों के बीच संघर्ष के रूप में धन का अधिकतम इस्तेमाल एक फर्म का सबसे उचित उद्देश्य है और पक्ष लागत को कम किया जा सकता है। ।

<u>लाभ अधिकतमकरण</u>:

लाभ कमाना हर आर्थिक गतिविधि का मुख्य उद्देश्य है। एक आर्थिक संस्थान होने के नाते एक व्यवसाय को अपनी लागतों को कवर करने और विकास के लिए धन प्रदान करने के लिए लाभ अर्जित करना चाहिए। लाभ अर्जित किए बिना कोई भी व्यवसाय जीवित नहीं रह सकता है। लाभ एक व्यावसायिक उद्यम की दक्षता का एक उपाय है।

लाभ उन जोखिमों से सुरक्षा के रूप में भी काम करते हैं जिन्हें सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है। संचित लाभ एक व्यवसाय को कीमतों में गिरावट,

लागत से न करके संस्था की सम्पूर्ण पूंजी लागत से की जाती है। सम्पूर्ण पूंजी लागत वित्त के विभिन्न स्त्रोतों की भारांकित औसत पूंजी लागत है। संस्था की पूंजी संरचना में सभी स्त्रोतों का हिस्सा एक समान नहीं होता है, अतः साधारण औसत के स्थान पर भारित औसत का उपयोग किया जाता है।

लाभों का विभाजन

लाभांश नीति (Dividend Policy) परिचय (Introduction)

- एक संस्था द्वारा अपनी आय में से समस्त व्ययों एवं आयोजनों को कम करने के पश्चात् शेष राशि, जो इसके अंशधारियों में बाँटी जाती है, लाभांश कहलाती है। लाभांश का वितरण करते समय संचालकों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि न केवल उचित लाभांश का वितरण कर अंशधारियों को सन्तुष्ट रखना चाहिए वरन् कम्पनी अपने भावी विकास एवं विस्तार हेतु कोषों की व्यवस्था भी उचित एवं पर्याप्त मात्रा में कर सकें।
- संयुक्त प्रमण्डल या कम्पनी एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें सदस्यों से पूँजी प्राप्त करके संस्था का वित्त-पोषण किया जाता है। सदस्य कम्पनी में पूँजी का विनियोग निरन्तर आय प्राप्त करने के उद्देश्य से करते हैं। यह आय उन्हें लाभांश के रूप में प्राप्त होती है। यदि सदस्यों को लाभांश वितरित न किया जाये या प्रचलित दर से कम दर पर लाभांश दिया जाये तो उनमें निराशा होगी तथा वे बचत व विनियोग के प्रति हतोत्साहित होंगे। यदि कम्पनियों अंशधारियों को इतना लाभांश नहीं दे सकती जितना वे सामान्यतः विनियोजित राशि पर ब्याज प्राप्त कर सकते हैं तो फिर ऐसी कम्पनियों के लिए अतिरिक्त पूँजी की व्यवस्था करना कठिन होगा तथा नई कम्पनियों के लिए पूँजी जुटाना और भी अधिक कठिन हो जायेगा। अतः लाभांश केवल कम्पनी व उससे सम्बद्ध सदस्यों के लिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय बचत को गति प्रदान करने तथा विनियोग को प्रोत्साहित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। लाभांश नीति का समुचित अर्थ समझने के लिए लाभांश का अर्थ समझना आवश्यक है।

लाभांश का अर्थ (Meaning of Dividend)

विभाजन योगय लाभ (Divisible Profits) का वह भाग जो कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को उसके द्वारा धारित अंशों के अनुपात में प्राप्त होता है, 'लाभांश' कहलाता है। विभाजन योग्य लाभ से अवश्य कम्पनी के उन लाभों से है, जो वैधानिक तौर पर अंशधारियों में लाभांश के रूप में बाँटे जा सकते हैं। इस आशय के लिए शुद्ध लाभ का अभिप्राय उस लाभ से होता है जो कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 394 की व्यवस्थाओं के अनुसार है तथा इसमें आयकर की राशि घटा दी गई है व कम्पनी अधिनिमय की धाना 205 के अनुसार हास घटा दिया गया है। कम्पनी द्वारा लाभांश की घोषणा तब तक नहीं की जा सकती है जब तक कि कम्पनी के पास पर्याप्त लाभ न हो, संचालक मण्डल सिफारिश न करें एवं वार्षिक साधारण सभा में अंशधारियों द्वारा अनुमोदन न हो।

लाभांश के प्रकार (Forms of Dividend) -

लाभांश विभिन्न रूपें में वितरीत किया जा सकता है। साधारणतया यह नकद के रूप में ही वितरित किया जाता है, किन्तु यह बोनस अंशों के रूप में भी वितरित किया जा सकता है। लाभांश नकद या बोनस अंशों के अतिरिक्त अन्य रूपों में वितरित किया जा सकता है। यहाँ लाभांश के प्रमुख रूपों का विस्तार से वर्णन किया गया है। ये रूप निम्नलिखित हैं

(1) नकद लाभांश (Cash Dividend) लाभांश का यह सबसे प्रचलित एवं लोकप्रिय रूप है। साधारणतया अंशधारी इस रूप में लाभांश लेना सबसे अधिक पसन्द करते हैं, क्योंकि लाभांश प्राप्ति का यह एक सुविधाजनक तरीका है। जिन कम्पनियों की तरल स्थिति ठीक होती है वे कम्पनीयाँ लाभांश नकद में ही वितरित करना पसन्द करती हैं। भारतीय कम्पनी अधिनियम की धारा 205 के अनुसार भारतीय कम्पनियाँ नकद व स्कन्ध लाभांश के अलावा अन्य किसी प्रकार से लाभांश नहीं बाँट सकती हैं।

(2) स्कन्ध लाभांश (Stock Dividend)- स्कन्ध लाभांश को "बोनस अंशों के रूप में लाभांश के नामसे जाना जाता है तथा ऐसा संचित कोषों या लाभों का पूँजीकरण करके किया जाता है। जिन कम्पनियों की तरल स्थिति ठीक नहीं होती, वे साधारणतया अपने लाभों का पूँजीकरण करके स्कन्ध लाभांश वितरित करती हैं। इसके अंतर्गत

कम्पनी नकद लाभांश नहीं देती है। ऐसे अंशों को बोनस अंश (Bonus Shares) के नाम से जाना जाता है। ऐसा करने से लाभ का समुचित उपयोग व्यवसाय में ही हो जाता है तथा लाभाश का वितरण भी सम्भव हो जाता

(3) बन्ध-पत्रों के रूप में लाभांश (Bond Dividend)- कम्पनी नकद लाभांश न देकर बन्ध-पत्रों या ऋण-पत्रों के रूप में भी लाभांश वितरित करती है। बन्ध-पत्र या ऋण-पत्र दीर्घकालीन हो सकते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि कम्पनी लाभांश का वितरण तत्काल न करके भविष्य की किसी तिथि को करना चाहती है। इस प्रकार का लाभांश तभी वितरित किया जाता है जब कम्पनी ब्याज संबंधी बढ़े हुए दायित्वों का सम्पूर्ण भार उठाने में अपने आपको असमर्थ पाये। कभी-कभी लाभांश के लिए प्रतिज्ञा-पत्र भी दिये जाते हैं जिन पर ब्याज भी दिया जा सकता है। इसे स्क्रिप (Scrip Dividend) कहा जाता है। स्क्रिप्ट लाभांश की अवधि अल्पकालीन होती है।

(4) सम्पत्ति लाभांश (Property Dividend) नगद के अतिरिक्त लाभांश सम्पत्ति के रूप में भी वितरित किया जा सकता है। अन्य कम्पनियों की तथा सरकार की प्रतिभूतियों (Govt. Securities) को लाभांश के रूप वितरित किया जा सकता है। इसी प्रकार कम्पनी की अन्य किसी विभाजन योगय सम्पत्ति को भी लाभांश के रूप में वितरित किया जा सकता है। लाभांश वितरण का यह रूप बहुत ही कम संस्थाओं द्वारा अपनाया जाता है, क्योंकि यह अंशधारियों को असुविधाजनक होता है। पश्चिमी देशों में कुछ मदिरा उत्पादक कम्पनियाँ मदिरा की बोतलें निर्धारित मूल्यों पर लाभांश के बदले वितरित करती हैं। इसे "वस्तुओं के रूप में लाभांश (Dividend in Kind) के नाम से जाना जा सकता है। भारतीय कम्पनियों में लाभांश वितरण कायह तरीका अभी प्रचलित नहीं है।

(5) संयुक्त लाभांश (Composite Dividend) जब लाभांश का कुछ हिस्सा नकद में तथा शेष सम्पत्ति के रूप में दिया जाता है, तो यह संयुक्त लाभांश कहलाता है।

लाभांश घोषणा एवं वितरण के सम्बन्ध में भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधान

भारत में लाभांश की घोषणा एवं वितरण के सम्बन्ध में कम्पनी अपने अन्तर्नियमों कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 205 तथा 206 एवं सारणी अ के नियमों का पालन करना अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्थाएँ उल्लेखनीय हैं masummersity),

(1) पूँजी में से लाभांश न बाँटा जाये (Restricting Payment of Dividend from capital) कम्पनी किसी भी अवस्था में पूँजी में से लाभांश नहीं बाँट सकती लाभांश वर्ष के लाभों या अन्य किन्हीं अवितरित लाभों में से ही दिया जाना चाहिए।

(2) पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों का पालन (As per Memorandum and Articles) संस्था के पार्षद सीमानियमों तथा अन्तर्नियमों में विभाजन योग्य लाभ के सम्बन्ध में कुछ निर्देश दिये हैं तो उनका पालन किया जाना चाहिए। लाभांश घोषित करने व उनको भुगतान करने की रीति का उल्लेखीनय वर्णन संस्था के अन्तर्नियमों में दिया जाता है ये अन्तर्नियम कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं के विरुद्ध नहीं हो सकते।

सारणी 'अ' के अधिनियम 85-94 के अधीन लाभांश के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं

(i) कम्पनी अपनी साधारण सभा में लाभांश घोषित कर सकती है। लाभांश उस धनराशि से अधिक नहीं हो सकते जिसके लिए संचालक मण्डल ने स्वीकृति दी है।

(ii) संचालक मण्डल समय-समय पर ऐसे लाभांशों का भुगतान कर सकता है। जो कि कम्पनी लाभों को देखते हुए उसे उचित प्रतीत होते हैं।

(iii) संचालक मण्डल कम्पनी मे लाभांश की स्वीकृति देने से पहले एक निश्चित धनराशि सुरक्षित कोष अथवा कोषों के लिए नियोजित कर सकता है और ऐसे कोषों का प्रयोग ऐसे कार्यों के लिए कर सकता है जिनके लिए कम्पनी के लाभ उचित रूप से प्रयोग किये जा सकते हैं। संचालक मण्डल कम्पनी के किन्हीं लाभों को उक्त कोषों से नियोजित न करके वर्ष के लिए हस्तान्तरित कर सकता है।

(iv) ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें अपने अशों के लिए लाभांश के विशेष अधिकार हैं, लाभांश घोषणा तथा भुगतान प्रदत्त धनराशि के आधार पर किया

- सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए **आत्मनिर्भर भारत** के तहत पहल के संबंध में विस्तार से बताया है।
- घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए **मेक इन इंडिया पहल** के एक हिस्से के रूप में भारत ने पिछले कुछ वर्षों में कई क्षेत्रों में एफडीआई के नियमों में ढील दी है।

❖ **विदेशी संस्थागत निवेश**

F II का फुल फॉर्म होता है " फॉरेन इंस्टीटूशनल इन्वेस्टर" जिसे हिंदी में "विदेशी निवेश संस्था" कहते है। इसमें कोई भी बाहरी देश की कम्पनी अपना पैसा किसी और देश की कम्पनी में लगाते हैं लेकिन किसी सेकंडेरी मार्केट (stock market) के जरिये तो उसे FII कहते है।

एफआईआई को विदेशी संस्थागत निवेशक कहते है। जब कोई विदेशी संस्थान हमारे देश के शेयर मार्केट, बीमा, बैंकिंग आदि में निवेश करते है, तो इस प्रकार से किया जाने वाला निवेश एफआईआई अर्थात् विदेशी संस्थागत निवेश कहलाता है। यह ऐसे निवेशक होते हैं जो अपने देश की पूँजी को किसी अन्य देश में निवेश करते है। विदेशी संस्थागत निवेशक एक बड़ा निवेशक होता है, एफआईआई हमारे देश की अर्थव्यवस्था में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

- एफआईआई सीधे देश के शेयर/प्रतिभूति बाजार, इसकी विनिमय दर और मुद्रास्फीति को प्रभावित करते हैं।
- एफआईआई प्राथमिक और द्वितीयक दोनों बाजारों में सूचीबद्ध, गैर-सूचीबद्ध और सूचीबद्ध होने वाली कंपनियों में निवेश कर सकते हैं।
- एफडीआई अधिक जानबूझकर होते हैं, जबकि एफआईआई धन के हस्तांतरण और संभावित कंपनी में पूंजीगत लाभ की तलाश में अधिक चिंतित होते हैं।
- भारत में, एफआईआई भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) के साथ पंजीकरण के बाद पोर्टफोलियो निवेश योजना (पीआईएस) के माध्यम से निवेश करते हैं।
- विदेशी संस्थागत निवेशक विकासशील देशों में निवेश करना चुनते हैं क्योंकि वे उभरती अर्थव्यवस्थाओं के कारण अधिक विकास क्षमता प्रदान करते हैं।
- कभी-कभी, एफआईआई कम समय के लिए प्रतिभूतियों में निवेश करते हैं। यह बाजार में तरलता के लिए सहायक है, लेकिन वे पैसे के प्रवाह में अस्थिरता भी पैदा करते हैं।

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की लाभ तथा हानियाँ :-

FDI , FDI इक्विटी प्रवाह प्राप्त करने वाले मेजबान देश और विदेशी निवेशकों दोनों को लाभ प्रदान करता है।

लाभ :-

- अधिमान्य टैरिफ
- अपेक्षाकृत कम श्रम लागत
- सब्सिडी वाली दरें
- विभिन्न कर प्रोत्साहन
- बाजार विविधकरण
- अधिक रोजगार के अवसर रोजगार में वृद्धि के लिए अग्रणी।
- प्रबंधकीय विशेषता , कौशल , ज्ञान, और प्रौद्योगिकी का प्रवाह।
- मानव पूँजी विकास
- आर्थिक उत्तेजना

हानियाँ :-

- बड़े बड़े दिग्गजों के प्रवेश से स्थानीय व्यवसायों का विस्थापन हो सकता है।
- लाभ का प्रत्यावर्तन यदि फर्म मेजबान देश का पुनर्निर्देश नहीं करती है। इससे मेजबान देश से बड़ी पूँजी बहिर्वाह होगी।

FDI और FII में क्या अंतर है !!

- कोई बाहर की कंपनी अपना पैसा भारत की कम्पनी या उसकी संस्था में लगाती है जिसमे किसी सेकंड पार्टी की आवश्यकता नहीं होती है तो उसे FDI कहते हैं. जबकि FII में बाहर की कम्पनी अपना पैसा भारत की कम्पनी में लगाती है लेकिन किसी सेकंड पार्टी के जरिये तो उसे FII कहते हैं.
- FDI में फॉरैन मैंनेजमेंट इस प्रोसेस को कंट्रोल करता है जबकि FII में सेकण्डरी मार्किट का हाथ होता है, FII में मैंनेजमेंट कण्ट्रोल की आश्यकता नहीं होती है.
- FDI लॉन्ग टर्म विज़न पे काम करती है जबकि FII लॉन्ग टर्म और शार्ट टर्म दोनों विज़न पे काम करती है.

INFUSION NOTES WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – 5

अत्यावश्यक सेवाओं का प्रबंधन

शिक्षा प्रबंधन

शिक्षा प्रबंधन मनुष्य द्वारा की जाने वाली प्रत्येक क्रिया किसी न किसी प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न होती है। इसी प्रकार शिक्षा की अवधारणा में दो प्रकार के परिवर्तन हुये हैं। (1) शिक्षा, मानव विकास की सशक्त प्रक्रिया के साथ-साथ राष्ट्र विकास एवं जनशक्ति नियोजन का आधार बन गई है। (2) यह एक मानवीय व्यवसाय के रूप में विकसित हो रही है। यह व्यवसाय, अन्य व्यवसायों से भिन्न है। इसमें शिक्षक, शिक्षा के द्वारा मानव विकास के लिए किये गये श्रम का मूल्य लेता है। यह व्यवसाय एक मिशन (सेवा कार्य) के रूप में है जिसका सम्पूर्ण लाभ समाज तथा राष्टं को मिलता है। अन्य व्यवसायों में लाभ व्यक्ति या संस्था को मिलता है और कर्मचारियों को केवल सेवा मूल्य प्राप्त होता है। शिक्षण-व्यवसाय (Teaching Profession) में प्रबंधन का विशेष महत्त्व है। शैक्षिक प्रबंधन की अवधारणा को हम इस प्रकार समझ सकते हैं-

1. **शिक्षण एक व्यवसाय है-**हैनी (Heney) के शब्दों में-'व्यवसाय वस्तुओं तथा सेवाओं के उस नियमित रूप व्य-विव्य, हस्तान्तरण अथवा विनिमय को कहते हैं जो लाभ कमाने के लिए किया जाता है। इस परिभाषा के अनुसार शिक्षा एक व्यवसाय है इसमें शिक्षक अपने ज्ञान तथा कौशल की सेवाएं, मान के बदले, छात्रों को देता है। छात्र, शिक्षण द्वारा प्रदान किये गये ज्ञान तथा कौशल उपयोग करके अपनी क्षमताओं का विकास करते हैं।
   व्यवसाय में क्रय-विक्रय, विनिमय, सेवाओं का लेन-देन, लाभ, प्रयोजन तथा प्रतिफल की अनिश्चितता, जोखिम एवं विनिमय में निरन्तरता के लक्षण पाये जाते हैं। उद्योग तथा व्यवसाय में लाभ उत्पादक को मिलता है। शिक्षा में उक्त सभी लक्षण पाये जाते हैं किन्तु इसमें जोखिम कम है। इसका लाभ व्यक्ति तथा समाज को मिलता है।
2. **शिक्षा एक प्रबंधन (Management) है-** शिक्षा, यद्यपि जीवन-पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया की सफलता उत्तम प्रबंधन पर निर्भर करती है। यदि प्रबंधन निरंकुश है तो शिक्षा की प्रक्रिया में अवरोध आएगे। यदि वह अिमानायकवादी है तो एक व्यक्ति या संस्था का वर्चस्व रहेगा। यदि मुक्त है तो अराजकता की संभावना बढ़ेगी। इसलिए शिक्षा-उद्योग अर्थात् शिक्षा संस्थाओं की सफलता उसके प्रबंधन पर निर्भर करती है। ओलीवर शैल्डेन के शब्दों में-'प्रबंधन, उद्योग (विद्यालय तथा शिक्षा) की वह जीवनदायिनी शक्ति है जो संगठन को शक्ति देता है, संचालित करता है एवं नियंत्रित करता है।' इसी प्रकार थियोहेमेन ने लिखा है-प्रबंधन एक विज्ञान के रूप में, प्रबंधन एक उच्च स्तरीय प्रबंधन समूह के रूप में तथा प्रबंधन एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में व्यक्त किया जाता है।'
   दूसरे शब्दों में प्रबंधन एक कार्यकारी समूह है, यह समूह कार्य का संचालन, निर्देशन, नियंत्रण एवं समन्वय करता है। इसलिए वह (प्रबन्धक) प्रशासक कहलाता है।
   प्रबन्धक या प्रशासक छः' तत्वों (1) मानव (2) मशीन (3) माल (4) मुद्रा बाजार (5) प्रबंधन (6) तथा संगठन का समन्वय करता है। पीटर डंकर के अनुसार-'प्रबन्धक, प्रत्येक व्यवसाय का गत्यात्मक तथा जीवनदायी अवयव है। इसके नेतृत्व के अभाव में उत्पादन के सामान, केवल सामान मात्र ही रह जाते हैं, कभी उत्पादन नहीं बन पाते हैं। विद्यालयी प्रबंधन में मानव (शिक्षक, छात्र), मशीन (विद्यालयी उपकरण) माल (शैक्षिक प्रक्रिया) तथा निष्पनि, मुद्रा बाजार (शुल्क, अर्थ व्यवस्था तथा मानव शक्ति नियोजन), प्रबंधन (समन्वय) तथा संगठन (प्रबन्धक, प्रधानाचार्य, शिक्षक, कर्मचारी, छात्र, अभिभावक, सामान) आदि निहित हैं। इन सबको गतिशील बनाये रखने में प्रबन्धक की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।
   शैक्षिक प्रबंधन एक विशेष क्रिया है। मानव समूह तथा संस्थाओं के संचालन के लिए अर्थात् विद्यालय के कर्मियों तथा विद्यालयी संस्था के संचालन के लिए शैक्षिक प्रबंधन का होना अत्यन्त आवश्यक है। उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र में व्यवस्था की यह प्रक्रिया प्रबंधन कहलाती है तो शिक्षा के क्षेत्र में यह प्रक्रिया प्रशासन कहलाती है। प्रशासन की प्रक्रिया में व्यक्ति अपने मद के अनुसार भूमिका का निर्वाह करता है। इसलिए प्रबंधन तथा प्रशासन को समानाथ्र्ी कहा जाता है। प्रचलित अवस्था में 'प्रबन्ध' शब्द उद्योग तथा व्यवसाय के क्षेत्र में उपयोग किया जाता है।

शिक्षा-प्रबंधन की परिभाषा

शिक्षा-प्रबंधन की प्रमुख परिभाषा इस प्रकार हैं-

किम्बाल एवं किम्बाल-प्रबंधन उस कला को कहते हैं जिसके द्वारा किसी उद्योग में मनुष्यों और माल को नियन्त्रित करने के लिए लागू आर्थिक सिद्धान्त को प्रयोग में लाया जाता है।

कुन्ट्ज-औपचारिक समूहों में संगठित लोगों से काम कराने की कला का नाम ही प्रबंधन है।

स्टेन्लेवेन्स-प्रबंधन सामान्य रूप से निर्णय लेने एवं मानवीय क्रियाओं पर नियंत्रण रखने की विधि है जिससे पूर्व निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके।

पीटरसन तथा प्लोमैन-प्रबंधन से आशय उस तकनीक से है जिसके द्वारा एक विशेष मानवीय समूह के उद्देश्यों का निर्धारण, स्पष्टीकरण तथा क्रियान्वयन किया जाता है। प्रबंधन यह जानने की कला है कि आप व्यक्तियों से वास्तव में क्या काम लेना चाहते हैं? और फिर यह देखना कि वे उसको सबसे मितव्ययी तथा उत्तम ढंग से पूरा करते हैं।

शिक्षा प्रबंधन की सामान्य विशेषताएँ

1970 से शिक्षा प्रबंधन तथा प्रशासन के क्षेत्र में नये युग का सूत्रपात हुआ। यह सूत्रपात इस प्रकार है-

1. शिक्षा प्रबंधन के सिद्धान्त तथा व्यवहार में परिवर्तन आ रहा है।
2. सैद्धान्तिक स्तर नवीन शब्दावली का निर्माण हो रहा है।
3. शैक्षिक प्रशासन के लिए शैक्षिक प्रबंधन, शैक्षिक संगठन जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है।
4. शैक्षिक प्रबंधन ज्ञान की नवीन शाखा के रूप में विकसित हो रहा है।
5. वाणिज्य तथा उद्योग के क्षेत्र में जिसे प्रबंधन कहते हैं, शिक्षा के क्षेत्र में उसे प्रशासन कहते हैं।

इस दृष्टि से थिया हेमेन ने प्रबंधन की अवधारणा इस परिभाषा से स्पष्ट की है-'प्रबंधन के तीन अर्थ हैं: प्रबंधन उच्चस्तरीय प्रबन्धकों का एक समूह है, प्रबंधन एक विज्ञान है, प्रबंधन एक सामाजिक क्रिया है, शिक्षा प्रबंधन की सामान्य विशेषताए इस प्रकार हैं।

1. **प्रबंधन उत्पादन का एक आर्थिक संसाधन है-** आर्थिक क्रियाओं में भूमि, श्रम, पूजी, साहस तथा विनिमय प्रमुख घटक हैं। ये सभी घटक स्वतन्त्र होते हुए भी प्रबंधन के अधीन हैं। प्रबंधन के सामानों के अभाव में उत्पनि के सभी सामान अपूर्ण एवं निष्क्रिय हैं।
2. **प्रबंधन एक अधिकार व्यवस्था है-**किसी भी क्षेत्र में प्रबंधन, अधिकार के रूप में प्रयुक्त होता है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रबन्धक तथा प्रबंधित, दो वर्ग होते हैं। प्रबंधक वर्ग के अधिकार अधिक होते हैं और वे अपने अधीनस्थों से कार्य लेते हैं। प्रबन्धक भी उच्च, माध्यम एवं पर्यवेक्षीय स्तर के होते हैं। सभी के अपने पदों के अनुरूप अधिकार होते हैं तथा भूमिकाएँ होती हैं ये अपने अधीनस्थों का मार्ग दर्शन करते हैं। नियंत्रण, समन्वय तथा नेतृत्व करते हैं।
3. **प्रबंधन एक लोक समूह है -** प्रबंधन की अवधारणाओं में यह है कि यह एक लोक समूह है। विद्यालय में प्रबन्धक, प्रधानाचार्य, अध्यापक, छात्र, अन्य कर्मचारी होते हैं। ये सभी अपने-अपने क्षेत्रों में प्रबंधन करते हैं। आधुनिक प्रबंधन शास्त्र में तीन व्यवस्थाए पाई जाती हैं। (1) पैत्रिक अथवा पारिवारिक (2) राजनीतिक (3) पेशेवर। पैत्रिक प्रबंधन वंशानुक्ऱम तथा परिवार की परम्पराओं के अनुसार चलता है। औद्योगिक घरानों में इसी प्रकार का प्रबंधन पाया जाता है। राजनीतिक प्रबंधन, सरकारी उपक्रमों (Government undertakings) में पाया जाता है। इनमें सनारूढ़ दल अपने हितैषियों की नियुक्तिया करते हैं। पेशेवर प्रबंधन में, प्रबंधन का प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति संस्थाओं का प्रबंधन करते हैं।
4. **शैक्षिक प्रबंधन एक समन्वयकारी संसाधन है -** शैक्षिक प्रबंधन, शिक्षा के विभिन्न सामानों में समन्वय करता है तथा एकीकरण के द्वारा वह शिक्षा की प्रक्रिया को सफल बनाता है। एच. एल, सिस्क के शब्दों में-'प्रबन्धन, नियोजन प्रक्रिया, संगठन प्रक्रिया, निर्देशन तथा नियंत्रण के द्वारा निर्धारित उद्धेश्यों को प्राप्त करने का संसाधन संयोजन है।
5. **शैक्षिक प्रबंधन एक समूह वाचक संज्ञा है -** शैक्षिक प्रबंधन में एक व्यक्ति या संस्था निहित नहीं होते, शैक्षिक प्रबन्ध में समूह निहित होते हैं जो अपनी-अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। प्रबंधन एक जटिल अर्थ वाली प्रक्रिया है इसका संबन्ध अधिकारियों से है, यह एक विज्ञान है और साथ ही यह एक प्रक्रिया भी है। प्रबंधन में अधीनस्थों से काम कराया जाता है।

जाता है और इसमें चार अवस्थाएँ होती हैं जिसे अगलेपृष्ठ पर दर्शाया गया है –

1. आगमन पूर्व अवस्था -आगमन पूर्व अवस्था में किए जाने वाले क्रियाकलापों में
(i)अतिथि के लिए दर उद्धृत करना
(ii) इसके पश्चात् केंद्रीय आरक्षण पद्धति या आरक्षण विभाग द्वारा कमरा आरक्षित करना शामिल है।
2. आगमन अवस्था -इस चरण में, जैसा कि शीर्षक से ज्ञात होता है, अतिथि का वास्तव में आगमन होता है और उसका नाम रजिस्टर में दर्ज किया जाता है या चेक-इन होता है।
3. कमरे पर आधिपत्य (ऑक्यूपेंसी)- इस चरण में अतिथि की आवश्यकताओं के अनुसार, अतिथि की सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए विभिन्न अतिथि सेवाओं के समन्वयन के साथ, विभिन्न सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। मुख्य केंद्र बिंदु अतिथि की संतुष्टि है, जिससे कि अतिथि का संरक्षण सुनिश्चित हो सके और वह प्रतिष्ठान की सेवाओं को आगे भी उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित हो सके। दूसरे शब्दों में, "ग्राहक की निष्ठा' को पाना और उसे बनाए रखना।

अभ्यास प्रश्न

अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न :-

1. शिक्षा एक प्रबंधन है, कैसे ? व्याख्या करें ?
2. शिक्षा प्रबंधन के क्षेत्र को समझाइये ?
3. हेल्थकेयर प्रबंधन क्या है ? समझाइये ?
4. पर्यटन प्रबंधन की मूलभूत संकल्पनाएँ बताइये?
5. अतिथि चक्र को समझाइये ?
6. हेल्थकेयर प्रबंधन के महत्व को स्पष्ट कीजिए ?

लेखांकन एवं अंकेक्षण

अध्याय – 1

लेखांकन की दोहरी लेखा प्रणाली

लेखांकन

वर्ष 1941 में अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ सर्टिफाइड पब्लिक एकाउंटेंटस ने लेखांकन की परीभाषा परिभाषा के अनुसार, " लेखकिन का संबंध उन लेन-देनों एवं घटनाओं, जो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से वित्तीय प्रकृति की होती है, को मुद्रा के रूप में प्रभावशाली ढंग मे लिखने, वर्गीकृत करने, संक्षेप में व्यक्त करने एवं उनके परिणामों की विश्लेषणात्मक व्याख्या करने की कला से है।

लेखांकन क्या है ?

लेखांकन दो शब्दों से मिलकर बना है- 'लेख' और 'अंकन'। जहां लेख का अर्थ "लिखने" से है और अंकन का अर्थ "अंक" से लगाया जाता है। इस प्रकार से व्यवसाय में जितने भी लेन-देन होते हैं उनको एक बही(Book) के रूप में लिखना ही "लेखांकन" (Accounting) कहलाता है। लेखांकन व्यवसाय की भाषा है। लेखांकन को लेखाकर्म के नाम से भी जाना जाता है ।

लेखांकन की अवधारणा

लेखांकन वह शास्त्र है जिसका संबंध मुख्य रूप से वित्तिय स्वभाव वाले लेन-देनों तथा घटनाओं के अभिलेखन, वर्गीकरण व विश्लेषण करने से है । व्यवसाय हो या फिर कोई कार्य जहां भी मुद्रा से संबंधित लेन-देन किए जाते हैं तो वहां लेखांकन की आवश्यकता पड़ती है । बिना एकाउंटिंग के व्यवसाय का कार्य अधूरा माना जाता है। आज लेखांकन का प्रयोग सभी प्रकार के व्यवसाय में किया जा रहा है- जैसे व्यापारिक संस्थाएं, गैर-व्यापारिक संस्थाएं,कंपनी तथा साझेदारी व्यापार आदि।

लेखांकन के प्रारंभिक क्रियाओं में शामिल होने वाले चरण

लेखांकन के प्रारंभिक क्रियाओं में निम्नलिखित चरणों को शामिल किया गया है-

1. अभिलेखन (Recording) : व्यवसाय में जो भी लेन-देन होते हैं, उनको पहली बार जिस बही में

लिखा जाता है उसे 'अभिलेखन' कहते हैं । यह लिखने की क्रिया ही रोजनामचा है, जिसे अंग्रेजी में Journal कहा जाता है।

2. वर्गीकरण (Classification) : रोजनामचा में लिखे सभी लेनदेन को अलग-अलग भागों में विभाजित करके लिखना ही 'वर्गीकरण' कहलाता है, क्योंकि व्यवसाय में एक ही तरह के लेन-देन नहीं होते हैं। जैसे - नगद, उधार, नगद वापसी, उधार वापसी,माल का क्रय , विक्रय, विक्रय वापसी आदि।
3. संक्षेपण(Summarising): वर्गीकृत लेनदेन को एक ही स्थान पर लिखा जाना 'संक्षेपण' है। इसे तलपट(Trail Balance) के नाम से भी जाना जाता है। जो कि जांच करने का कार्य करता है।

लेखांकन की विशेषताएं -

1. लेखांकन की विशेषताएं व्यावसायिक लेन-देन की पहचान करना और इसे नियमित तथा सुव्यवस्थित ढंग से लेखा पुस्तकों में लिखना है ।
2. लेखा बहियों में केवल उन्हीं लेन- देन का लेखा किया जाता है जिसे मुद्रा में व्यक्त किया जा सकता है ।
3. ऐसी घटनाओं तथा लेनदेन जिन्हें मुद्रा में व्यक्त नहीं किया जा सकता हो, लेखा नहीं किया जाता है । लेखांकन की विशेषताएं वित्तीय व्यवहारों एवं घटनाओं को इस प्रकार से प्रस्तुत करना है, जिससे कि लेन-देन का विश्लेषण तथा व्याख्या आसानी से हो सके
4. लेखांकन व्यवसायिक लेन-देन की एक कला है ।
5. लेखांकन के अंतर्गत लेन-देन का संक्षेपण किया जाता है। लेखांकन की विशेषताएं सभी पक्षकारों को उनके द्वारा वांछित सूचनाएं प्रदान करता है ।

लेखांकन के उद्देश्य :-

लेखांकन प्रत्येक व्यवसाय के लिए आवश्यक है। लेखांकन के उद्देश्य निम्नलिखित है-

नियमित एवं सुव्यवस्थित लेखा - लेखांकन का प्रथम उद्देश्य सभी लेन-देन का नियमित एवं सुव्यवस्थित ढंग से लेखा करने से है । सुव्यवस्थित ढंग से लेखा करने से भूल की संभावना नहीं रहती है और परिणाम सही प्राप्त होता है।

1. शुद्ध लाभ -हानि का निर्धारण - यह लेखांकन का दूसरा उद्देश्य है। एक निश्चित अवधि का लाभ - हानि ज्ञात करना। लाभ- हानि को ज्ञात करने के लिए किसी संस्था द्वारा व्यापार खाता(Trading Account), लाभ -हानि खाता (Profit & Loss Account) तथा आर्थिक चिट्ठा (Balance Sheet) बनाया जाता हैं।
2. कानूनी आवश्यकता - कानूनी आवश्यकता को पूरा करना एक लेखांकन का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। लेखांकन प्रत्यक्ष (Direct) और अप्रत्यक्ष (Indirect) करों के लिए रिटर्न दाखिल करने के लिए सबसे अच्छा आधार प्रस्तुत करता हैं।
3. पक्षकारों को सूचना - व्यवसाय में हित रखने वाले पक्षों को सूचना उपलब्ध कराना लेखांकन का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। व्यवसाय में कई पक्षों के हित होते हैं जैसे - स्वामी (Proprietor), लेनदार (Creditor), विनियोजक (Investor) आदि।
4. वित्तीय स्थिति - लेखांकन का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य संस्था की वित्तीय स्थिति के संबंध में जानकारी प्राप्त करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु एक आर्थिक चिट्ठा (Balance Sheet) बनाया जाता है । जिसमें दाएं ओर संपत्तियों(Assets) तथा बाएं और पूंजीवाद व दायित्व(Capital And Liabilities) को प्रदर्शित किया जाता है।

लेखांकन की द्विपक्ष- अवधारणा :- इस अवधारणा के अनुसार प्रत्येक व्यापारिक लेन-देन के दो पहलु होते हैं । एक को डेबिट और दूसरे को क्रेडिट कहा जाता है । इस प्रणाली में लेन-देन दोनों पहलुओं में लिखे जाते हैं, इसलिए इसे डबल एंट्री सिस्टम कहा जाता है ।

द्विपक्ष अवधारणा :- इस अवधारणा के अनुसार प्रत्येक व्यापारिक लेन-देन जो खातों की पुस्तकों में लिखा जाता है, दोनों पक्षों या दोनों खातों को प्रभावित करता है । यदि एक पक्ष को डेबिट किया जाता है तो दूसरे पक्ष को क्रेडिट किया जाएगा । यह अवधारणा डबल एंट्री सिस्टम पर लागू होती है।

उदाहरण :- 50000 रुपये क्रेडिट पर खरीदा गया सामान नियम के अनुसार खाते से डेबिट किया जाएगा । और नकद खाते में जमा किया जाएगा ताकि दोनों पक्षों का योग बराबर हो । एक पक्ष में बदलाव होगा तो दूसरा पक्ष भी बदलेगा ।

उदाहरण:- हमने व्यापार के लिए 30,000 रुपये की मशीनरी खरीदी । इससे 2 परिवर्तन हुए, पहला मशीनरी खाते में 30,000 रुपये की वृद्धि हुई और नकद खाते में सामान राशि में कमी होगी । इन

- दोहरी प्रविष्टि भी हमेशा संतुलन में रहने के लिए लेखांकन समीकरण (संपत्ति = देनदारियाँ + मालिक की इक्विटी) की अनुमति देती है । विज्ञापन व्यय से जुड़े हमारे उदाहरण में लेखांकन समीकरण संतुलन में रहा क्योंकि व्यय के कारण मालिक की इक्विटी घट जाती है । उस उदाहरण में एसेट कैश कम हो गया और मालिक की इक्विटी के भीतर मालिक का पूंजी खाता भी कम हो गया ।
- दोहरे प्रविष्टि का एक तीसरा पहलु यह है कि राशि सामान्य खाता बही में दर्ज की जाती है, क्योंकि डेबिट को क्रेडिट के रूप में दर्ज की गई राशी के बराबर होना चाहिए ।

Advantages of Double Entry System (दोहरा लेखा प्रणाली के लाभ) –

1. Scientific System (वैज्ञानिक प्रणाली) –
दोहरा लेखा प्रणाली का एक लाभ यह है कि इसमें सारे लेन-देनों को Rules के according record किया जाता है, पुस्तपालन की यह प्रणाली दूसरी प्रणाली की तुलना में वैज्ञानिक प्रणाली है।

2. Complete record of every transaction (हर लेन-देन का पूरा रेकॉर्ड) –
Double Entry System में सारे accounts तीन पार्ट में बाँट दिए जाते हैं। जैसे- Personal Accounts, Real Accounts, और Nominal Accounts और इसी के according सारे लेन-देनों को Debit या Credit किया जाता है। इस तरह इस प्रणाली के अंतर्गत सारे लेन-देनों का record रखा जाता है।

3. Prepare Trial Balance (तलपट बनाना) –
Double Entry System का एक advantage यह है कि अलग-अलग account बनाकर जितनी भी amount record की गयी है जितनी amount Debit में है उतनी ही amount Credit में record होनी चाहिए। इसको check करने के लिए Trial Balance prepare किया जाता है ।

4. Prepare Trading and Profit & Loss Account (व्यापारिक व लाभ-हानि खाता तैयार करना) –
Trial Balance prepare करने के से पता चल जाता है कि Debit और Credit के balance बराबर हैं और इसी Trial Balance की help से फिर Trading Account बनाया जाता है जिससे Gross Profit या Gross Loss का पता चलता है और फिर इसी तरह Profit and Loss Account prepare करके एक particular period का Net Profit या Net Loss का पता चलता है।

5. व्यवसाय के वित्तीय स्थिति की जानकारी –
हर एक businessman अपने business की वित्तीय स्थिति के बारे में ज़रूर जानना चाहता है कि उसका business कैसा चल रहा है? उसकी assets कितनी हैं? उसकी Liabilities क्या-क्या हैं? इस सारी चीज़ों के बारे में Balance Sheet के द्वारा पता चलता है।

द्वि-अंकन प्रणाली के नियम
नियम या सिद्धांत से आशय उस सामान्य नियम से है जो व्यवहारों या सौंदों की दिशानिर्देश करने में सहायक होता है। वास्तव में ये सिद्धांत मुख्यतया तीन नियमों पर आधारित है इसे 'दोहरा लेखा प्रणाली के सिद्धान्त' भी कहा जाता है।
द्वि-अंकन प्रणाली के नियम खातों के अनुसार प्रयोग किये जाते हैं। दोहरा लेखा प्रणाली में खातों के तीन प्रकार होते हैं। एक विशेष खाते को डेबिट या क्रेडिट करने से पूर्व हमें यह देख लेना चाहिए कि व्यापारी द्वारा किये गए सौंदे से कौन सी श्रेणी के खाते प्रभावित होते हैं यह जान लेने के पश्चात् निम्नलिखित नियमों का पालन किया जायगा।

व्यक्तिगत खाते (Personal Accounts) व्यक्तिगत खातों के मामले में हम लाभ प्राप्त करने वाले व्यक्ति या संस्थान का खाता उसके द्वारा प्राप्त लाभ से डेबिट करते हैं और लाभ देने वाले व्यक्ति या संस्थान का खाता उसके द्वारा प्रदत्त लाभ से क्रेडिट करते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं-
- (लाभ) पाने वाले को डेबिट करो (Debit the Receiver) ; और
- (लाभ) देने वाले को क्रेडिट करो (Credit the giver)।

सम्पति (वस्तुगत) खाते (Real Accounts)
सम्पत्ति खाते प्राप्ति से डेबिट और जाने वालें (outgoing) से क्रेडिट किए जाते हैं। अथवा
- व्यापार में जो आये उसे डेबिट करो (Debit what comes in); और

- व्यापार से जो जाये उसे क्रेडिट करो (Credit what goes out);

नाम मात्र (के) खाते (नॉमिनल एकाउण्ट्स)

प्रत्येक व्यय अथवा हानि की धन-राशि को डेबिट किया जाता है और प्रत्येक आय अथवा लाभ की धनराशि को क्रेडिट किया जाता है।

दूसरे शब्दों में -

- सभी व्ययों और हानियों को डेबिट करो (Debit all Expenses and Losses) और
- सभी आयों और लाभों को क्रेडिट करो (Credit all incomes and gains)।

- **दोहरी प्रविष्टि प्रणाली के प्रमुख भाग**

दोहरा लेखा प्रणाली के प्रमुख भाग निम्नलिखित है। इन्हें 'दोहरा लेखा प्रणाली की सीढ़ियां' या 'लेखाकर्म का ढांचा' भी कहा जाता है।

1. प्रारंभिक लेखा या रोजनामचा (जर्नल)
2. वर्गीकरण
3. तलपट (ट्रायल बैलेंस) बनाना
4. अंतिम लेखे (Final accounts)
   (क) निर्माण खाता या व्यापार खाता
   (ख) लाभ हानि खाता या आय व्यय खाता
   (ग) स्थिति विवरण (चिट्ठा)

➢ **सिंगल एंट्री एवं डबल एंट्री सिस्टम के बीच अंतर : -**

यदि डबल एंट्री सिस्टम है तो सिंगल-एंट्री सिस्टम का क्या हुआ ?

सिंगल एंट्री सिस्टम सिंगल लेजर में वित्तीय लेन-देन को रिकॉर्ड करता है। लेन-देन केवल एक खाते को प्रभावित करने के लिए दिखाए जाते हैं। ऐसी व्यवस्था में केवल एक खाते का मूल्य बढ़ेगा या घटेगा। सबसे महत्वपूर्ण नुकसान जो इस प्रणाली से ग्रस्त है, वह है उचित वित्तीय रिपोर्ट या विवरण तैयार करने में असमर्थता ।

रोजनामचा एक ऐसी बही है जिसमें व्यावसायिक लेन-देनों का क्रमवार अभिलेखन किया जाता है अर्थात् उनके होने के क्रम में लिखा जाता है। रोजनामचे में जब लेखा किया जाता है उसे प्रविष्टि के नाम से जाना जाता है। रोजनामचे में लेनदेनों की प्रथम बार प्रविष्टि की जाती है। रोजनामचे को मूल अभिलेखन की पुस्तक अथवा प्रारंभिक प्रविष्टि की पुस्तक कहते है।

वत्तीय प्रकृति के वित्तीय लेन-देनों को खातों के विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है जैसे कि परिसम्पत्तियाँ, देयताएँ, पूँजी, आगम एवं व्यय। इनके नाम अथवा जमा में इनसे संबंधित नाम एवं जमा के नियमों के आधार पर प्रविष्टियाँ की जाती हैं। प्रत्येक व्यावसायिक लेनदेन दो खातों को प्रभावित करता है। द्विअंकन प्रणाली को लागू करते समय एक खाते के नाम तथा दूसरे के जमा में प्रविष्टि की जाएगी। प्रत्येक लेनदेन का अभिलेखन रोजनामचे में किया जा सकता है। रोजनामचा में लेनदेन के अभिलेखन की प्रक्रिया को रोजनामचे में प्रविष्टि करना कहते हैं।

छोटे व्यवसायिक गृहों में सामान्यतः एक ही रोजनामचा बही बनाई जाती है जिसमें सभी लेनदेनों का अभिलेखन किया जाता है। लेकिन बड़े व्यावसायिक गृहों में क्योंकि लेनदेनों की संख्या बहुत अधिक होती है इसलिए रोजनामचा को कई लेखा पुस्तकों में विभक्त कर दिया जाता है जिन्हें विशेष रोजनामचा कहते हैं। इन पुस्तकों में लेन-देनों का, उनकी प्रकृति के अनुसार, अभिलेखन किया जाता है अर्थात् उधार विक्रय को विक्रय बही में, सभी नकद लेन-देनों को रोकड़ बही में आदि।

रोजनामचे का प्रारूप

प्रत्येक रोजनामचे का प्रारूप निम्न प्रकार का होता है। यह स्तम्भीय बही होती है। प्रत्येक स्तम्भ को एक नाम दे दिया जाता है जो इसके शीर्ष पर लिखा जाता है। रोजनामचे का प्रारूप नीचे दिया गया है।

❖ **रोजनामचा: अर्थ एवं प्रारूप**

Date	Particulars	Journal Folio	Amount(Rs.)	Date	Particulars	Journal Folio	Amount (Rs.)

व्यापार खाता (Trading Account) क्या है ?

Trading Account जिसे हम हिन्दी मे व्यापार खाता या माल खाता भी कहते हैं। किसी व्यवसायी द्वारा माल (Goods) का क्रय विक्रय करने के बाद व्यवसाय में होने वाले सकल लाभ या हानि (Gross Profit and Loss) सकल लाभ या हानि (Gross Profit and Loss) का पता लगाने के लिए व्यवसायी द्वारा एक खाता बनाया जाता है। जिसे व्यापार खाता (Trading Account) कहते हैं।

व्यापार खाता (Trading Account) मे माल (Goods) क्रय विक्रय तथा माल (Goods) क्रय (Purchase) करते समय लगने वाले प्रत्यक्ष खर्चों (Direct Expenses) को शामिल किया जाता है। व्यापार खाता (Trading Account) से किसी व्यवसायी को व्यवसाय में होने वाले सकल लाभ या हानि (Gross Profit and Loss) का पता चलता है।

साधारण भाषा में कहे तो व्यवसाय मे सकल लाभ या हानि (Gross Profit and Loss) का ज्ञात करने के लिए जो खाता तैयार किया जाता है। व्यापार खाता या माल खाता (Trading Account) कहते हैं। व्यापार खाते को माल खाता इसलिए भी कहा जाता है, क्योंकि इस खाते में केवल माल (Goods) के क्रय विक्रय संबंधित लेन देनो को ही शामिल किया जाता है।

व्यापार खाता (Trading Account) से होने वाले लाभ या महत्त्व :-

1. व्यापार खाता (Trading Account) बनांने से किसी व्यवसायी को व्यवसाय के सकल लाभ या हानि (Gross Profit and Loss) का ज्ञान होता है।
2. व्यापार खाता (Trading Account) बनाने से सकल लाभ (Gross Profit) का पता चलता है। और इसी सकल लाभ (Gross Profit) के प्रतिशत (Ratio) से व्यवसायी अपने व्यवसाय का मूल्यांकन करता है।
3. व्यापार खाता (Trading Account) बनाने से व्यवसायी को व्यवसाय में होने वाले शुद्ध क्रय (Net Purchase) का ज्ञान होता है।
   शुद्ध क्रय (Net Purchase) निकालने के लिए सूत्र:-
   Net Purchase = Cash Purchase + Credit Purchase – Purchase Return
4. व्यापार खाता (Trading Account) बनाने से व्यवसायी को व्यवसाय में होने वाले शुद्ध विक्रय (Net Sales) का ज्ञान होता है।
   शुद्ध विक्रय (Net Sales) निकालने के लिए सूत्र:-
   Net Sales = Cash Sales +Credit Sales –Sales Return
5. व्यापार खाता (Trading Account) बनाने से व्यवसायी को व्यवसाय में होने वाले प्रत्यक्ष व्ययों (Direct Expenses) का ज्ञान होता है।
6. व्यापार खाता (Trading Account) बनाने से व्यवसाय में विक्रय (Sale) किये गए मॉल (Goods) की लागत का मूल्यांकन करने में आसानी होती है।

व्यापार खाता (Trading Account) का प्रारूप :-

व्यापार खाता (Trading Account)
for the year ended ....
दिनांक ....

Dr.			Cr.
विवरण Particulars	राशि Amount	विवरण Particulars	राशि Amount

व्यापार खाता (Trading Account) कब बनाया जाता है। :-

साधारणतः व्यापार खाता (Trading Account) वित्तीय वर्ष के अंत में बनाया जाता है। परन्तु कभी-कभी ये व्यवसायी द्वारा 3 माह , 6 माह , तथा 9 माह में व्यवसाय की वित्तीय स्थिति की जानकारी प्राप्त करने के लिए बनाया जा सकता है।

व्यापार खाता (Trading Account) बनाने का आधार :-

तलपट (Trial Balance) अंतिम खाते का आधार होता है।

व्यापार खाता (Trading Account) तलपट (Trial Balance) के आधार पर बनाया जाता है। अर्थात् सबसे पहले तलपट (Trial Balance) बनाया जाता है। फिर इस तलपट (Trial Balance) को देखकर व्यापार खाता (Trading Account) बनाया जाता है।

- व्यापार खाता (Trading Account) में शामिल होने वाली मदे :-
- Opening Stock (प्रारंभिक रहतिया)
- Purchase (क्रय)
- Purchase Return (क्रय वापसी)
- Cost Of Purchase (मॉल क्रय करते समय लगने वाले व्यय)
- Cost Of Production (मॉल उत्पादन करते समय लगने वाले व्यय)
- Sales (विक्रय)
- Sales Return (विक्रय वापसी)
- Closing Stock (अंतिम रहतिया)

लाभ – हानि (Profit and Loss Account) खाता क्या है।

वित्तीय वर्ष के अंत में शुद्ध लाभ या हानि ज्ञात करने के लिए व्यापारी द्वारा जो खाता बनाया जाता है। उसे लाभ – हानि खाता (Profit and Loss Account) कहते हैं।

जैसा कि हम सभी जानते हैं। व्यवसाय कोई भी हो व्यापारी का मुख्य उद्देश्य लाभ अर्जित करना ही होता है। और व्यापारी को यह जानना भी अति आवश्यक होता है, कि व्यापार मे लाभ हो रहा है या हानि। और इसी लाभ और हानि को जानने के लिए व्यापारी द्वारा लाभ – हानि खाता (Profit and Loss Account) बनाया जाता है।

लाभ – हानि खाते (Profit and Loss Account) मे दो पक्ष होते हैं। पहला पक्ष डेबिट पक्ष और दूसरा पक्ष क्रेडिट पक्ष कहलाता है। यदि व्यापारी को Gross Loss होता है। तो इसे डेबिट पक्ष में लिखा जाता है। और साथ ही समस्त अप्रत्यक्ष खर्चों (Indirect Expenses) को भी डेबिट पक्ष लिखा जाता है। और यदि व्यापारी को शुद्ध लाभ होता है। तो इसे क्रेडिट पक्ष मे लिखा जाता है। और साथ ही समस्त अप्रत्यक्ष आय (Indirect Income) को भी क्रेडिट पक्ष में लिखा जाता है।

वित्तीय वर्ष के अंत में जब व्यापारी अपने अंतिम खाते बनाता है। तो वह सबसे पहले व्यापार खाता (Trading Account) बनाता है। और व्यापार खाते से जो सकल लाभ (Gross Profit) प्राप्त होता है। तो इस सकल लाभ (Gross Profit) को आगे लाभ – हानि खाते (Profit and Loss Account) मे ले जाया जाता है। लाभ – हानि खाते में समस्त अप्रत्यक्ष खर्चों (Indirect Expenses) को सकल लाभ (Gross Profit) मे से घटाया जाता है। तथा समस्त अप्रत्यक्ष आय (Indirect Income) को सकल लाभ (Gross Profit) मे जोड़ा जाता है। तथा शुद्ध लाभ या शुद्ध हानि को ज्ञात किया जाता है।

(नोट :- अवास्तविक खातों (Nominal Account) से संबंधित सभी खातों के शेष लाभ – हानि खाते में लिखे जाते हैं।)

लाभ – हानि खाते मे शुद्ध (Net Profit) लाभ कब होता है।

यदि लाभ – हानि खाते के डेबिट (Dr.)पक्ष का योग क्रेडिट (Cr.) पक्ष के योग से कम होता है तो लाभ होता है, जिसे शुद्ध लाभ (Net Profit) कहते हैं।

लाभ – हानि खाते मे शुद्ध हानि (Net Loss) कब होती है।

यदि लाभ – हानि खाते के क्रेडिट (Cr.) पक्ष का योग डेबिट (Dr.) पक्ष के योग से कम होता है तो हानि होती है, जिसे शुद्ध हानि (Net Loss) कहा जाता है।

लाभ – हानि खाता (Profit and Loss Account) बनाने का आधार

व्यापार खाता (Trading Account) और लाभ – हानि खाता (Profit and Loss Account) तलपट (Trial Balance) के आधार पर ही बनाया जाता है। अर्थात् सबसे पहले तलपट (Trial Balance) बनाया जाता है। फिर इस तलपट (Trial Balance) को देखकर सबसे पहले व्यापार खाता (Trading Account) बनाया जाता है। और फिर बाद में लाभ – हानि खाता (Profit and Loss Account) बनाया जाता है।

लाभ – हानि खाते का प्रारूप

लाभ हानि खाता
(Profit and Loss Account)
for the year ended ....
दिनांक ....

Dr. | Cr.

विवरण Particulars	राशि Amount	विवरण Particulars	राशि Amount
To Trading A/c (Gross Loss)	0.00	By Trading A/c (Gross Profit)	0.00
To Office Expenses	0.00	By Rent Received	0.00
To Salaries	0.00	By Interest Received	0.00
To Bank Charges	0.00	By Income for Invesment	0.00
To Office Rent	0.00	By Discount Received	0.00
To Office Lighting Expenses	0.00	By Bad Debt Recovered	0.00
To Depreciation	0.00	By Commission	0.00
To Charity Expenses	0.00	By Apprentice Premium	0.00
To Postage Expenses	0.00	By By Bank Interest Received	0.00
To Freight Out Ward Expenses	0.00	By P.P.F. A/c Interest Received	0.00
To Stationery Expenses	0.00	Total	0.00
To Travelling Expenses	0.00		
To Telephone Expenses	0.00	By Net Loss	0.00
To Interest Paid On Loan	0.00	(Transfer to Capital Account)	
To Discount	0.00		
To Carriage Out Ward Expenses	0.00		
To Advertising Expense	0.00		
To Packing Expenses	0.00		
To Commission Paid	0.00		
To Maintenance Expenses	0.00		
To Printing Expenses	0.00		
To Bad Debts	0.00		
To Audit Fees	0.00		
To Discount Allowed	0.00		
To Wages Expenses	0.00		
To Repair Expenses	0.00		
To Fire Insurance	0.00		
To Legal Expense	0.00		
To Interest On Bank Loan	0.00		
Total	0.00		
To Net Profit	0.00		
(Transfer to Capital Account)			
	0.00		0.00

लाभ – हानि खाते के डेबिट (Dr.) पक्ष में शामिल होने वाली मदे

लाभ – हानि खाते के डेबिट पक्ष में वे सभी खर्चो को लिखा जाता है। जो मॉल (Goods) के क्रय – विक्रय से सम्बंधित नहीं होते है। जैसे :-

- Gross Loss (शुद्ध हानि)
- Office Expenses (कार्यालय खर्च)
- Salaries (वेतन)
- Bank Charges (बैंक खर्च)
- Office Rent (कार्यालय का किराया)
- Office Lighting Expenses (कार्यालय का लाइट बिल)
- Depreciation (ह्रास)
- Charity Expenses (दान का खर्च)
- Postage Expenses (डाक खर्च)
- Freight Out Ward Expenses (भाड़ा खर्च)
- Stationery Expenses (लेखन सामग्री खर्च)
- Travelling Expenses (यात्रा खर्च)
- Telephone Expenses (दूरभाष बिल)
- Interest Paid On Loan (ऋण पर ब्याज चुकाया)
- Discount (कटौती)
- Carriage Out Ward Expenses (बाहरी भाड़ा खर्च)
- Advertising Expense (विज्ञापन का खर्च)

प्रिय दोस्तों, अब तक हमारे नोट्स में से अन्य परीक्षाओं में आये हुए प्रश्नों के परिणाम देखने के लिए क्लिक करें -

RAS PRE. - https://www.youtube.com/watch?v=p3_i-3qfDy8&t=1253s

Rajasthan CET Gradu. Level - https://youtu.be/gPqDNlc6UR0

Rajasthan CET 12th Level - https://youtu.be/oCa-CoTFu4A

VDO PRE. - https://www.youtube.com/watch?v=gXdAk8S6W18&t=202s

Patwari - https://www.youtube.com/watch?v=X6mKGdtXyu4&t=2s

PTI 3rd grade - https://www.youtube.com/watch?v=iA_MemKKgEk&t=5s

SSC GD – 2021 - https://youtu.be/2gzzfJyt6vI

EXAM (परीक्षा)	DATE	हमारे नोट्स में से आये हुए प्रश्नों की संख्या
RAS PRE. 2021	27 अक्तूबर	74 प्रश्न आये
SSC GD 2021	16 नवम्बर	68 (100 में से)
SSC GD 2021	30 नवम्बर	66 (100 में से)
SSC GD 2021	08 दिसम्बर	67 (100 में से)
राजस्थान S.I. 2021	14 सितम्बर	119 (200 में से)
राजस्थान S.I. 2021	15 सितम्बर	126 (200 में से)
RAJASTHAN PATWARI 2021	23 अक्तूबर (1st शिफ्ट)	79 (150 में से)
RAJASTHAN PATWARI 2021	23 अक्तूबर (2nd शिफ्ट)	103 (150 में से)

whatsa pp- 1 https://wa.link/9qwi7z web.- https://bit.ly/41wfqPD

RAJASTHAN PATWARI 2021	24 अक्तूबर (2nd शिफ्ट)	91 (150 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	27 दिसंबर (1st शिफ्ट)	59 (100 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	27 दिसंबर (2nd शिफ्ट)	61 (100 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	28 दिसंबर (2nd शिफ्ट)	57 (100 में से)
U.P. SI 2021	14 नवम्बर 2021 1st शिफ्ट	91 (160 में से)
U.P. SI 2021	21नवम्बर2021 (1st शिफ्ट)	89 (160 में से)
Raj. CET Graduation level	07 January 2023 (1st शिफ्ट)	96 (150 में से)
Raj. CET 12th level	04 February 2023 (1st शिफ्ट)	98 (150 में से)

& Many More Exams like UPSC, SSC, Bank Etc.

INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO
FREE SAMPLE

नोट्स खरीदने के लिए इन लिंक पर क्लिक करें

Whatsapp - https://wa.link/9qwi7z

Online order - https://bit.ly/41wfqPD

Call करें - 9887809083